July
2024

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

सहाबा किराम (रज़ि०)

नुबूव्वते मुहम्मदी (स०अ०व०) का शाहकार

"रसूलुल्लाह (स०अ०व०) के तैयार किये हुए अफ़राद में से एक-एक फ़र्द नुबूव्वत का शाहकार है और नूए इन्सानी के लिए बाइसे शर्फ़ व इफ़्तिख़ार है। इन्सानियत के मुरक़्क़ा में बल्कि इस पूरी कायनात में पैग़म्बरों को छोड़कर इससे ज़्यादा हसीन व जीमल, इससे ज़्यादा दिलकश व दिलआवेज़ तस्वीर नहीं मिलती जो उनकी ज़िन्दगी में नज़र आती है। उनका पुख़्ता यक़ीन, उनका गहरा इल्म, उनका सच्चा दिल, उनकी बेतकल्लुफ़ ज़िन्दगी, उनकी बेनफ़्सी, ख़ुदा तरसी, उनकी पाकबाज़ी, पाकीज़गी, उनकी शफ़क़त व राफ़्त और उनकी शुजाअत व जिलादत, उनका ज़ौक़े इबादत और शौक़े शहादत, उनकी शहसवारी और उनकी शबज़िन्दादारी, उनकी सीमोज़र से बेपरवाई और उनकी दुनिया से बेरग़बती, उनका अद्ल, उनका हुस्ने इन्तिज़ाम, दुनिया की तारीख़ में अपनी नज़ीर नहीं रखता।"

मुफ़क्किरे इस्लाम
हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)
(दो मुतज़ाद तस्वीरें: १७)

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

मिसाली जमाअत

"हज़रात–ए–सहाबा (रज़ि०) की जमाअत ने रसूलुल्लाह (स०अ०व०) की सोहबते बाबरकत उठाई और फिर आपके मिशन को जान व दिल से ज़्यादा अज़ीज़ रखकर राहे ख़ुदा में सख़्त अज़ीयतें उठाईं और कुर्बानियां दीं, घरबार छोड़ा, जिहाद किया, हिजरत की और दुनिया में दीन के पैग़ाम को रसूलुल्लाह (स०अ०व०) के तरीक़े और कुरआन की आवाज़ को आम करने के लिए निकल पड़े। एक बर्रे अज़ीम (महाद्वीप) से दूसरे बर्रे अज़ीम तक, अरब से अजम तक और जहां मुमकिन हुआ वह वहां गए और जहां ख़ुद न पहुंच सके वहां ताबईन को भेजा, कुछ ने जामे शहादत नोश किया, कुछ रसूलुल्लाह (स०अ०व०) के लिए ढाल बने और दुनिया के एक हिस्से से दूसरे हिस्से में जाकर अपने आला अख़लाक़ व किरदार के ज़रिये इस्लाम की हक़्क़ानियत साबित की और लोगों की तरबियत के ज़रिये ईमान व यक़ीन दिलों में रासिख़ किया और रब्बानियत पैदा की। सहाबा किराम (रज़ि०) का क़यामत तक आने वाली नस्लों पर अब्दी एहसान रहेगा, कोई तस्लीम करे या न करे यह एक हक़ीक़त है जिसको नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

सहाबा किराम (रज़ि०) की इस्लाम के लिए कुर्बानी, अल्लाह की मुहब्बत, रसूलुल्लाह (स०अ०व०) के लिए फ़िदाइयत और एक–दूसरे के लिए ईसार व तआउन और हमदर्दी, ज़ोहद व इबादत, तवाज़े, नमाज़ में इन्हिमाक, तौहीद की पुख़्तगी, कुफ़्र व शिर्क से आख़िरी दर्जे की नफ़रत, अल्लाह की रज़ा और उसके फ़ज़्ल की तलब, तौबा व अनाबत, अल्लाह और उसके रसूल (स०अ०व०) के फ़रमान के आगे जान देने और सबकुछ कुर्बान कर देने का जज़्बा, ख़शीयत और अल्लाह का ख़ौफ़ और अल्लाह की राह में ज़्यादा से ज़्यादा ख़र्च कर देने का जज़्बा, सब सिफ़ात व ख़ुसूसियात और इम्तियाज़ात उसी क़ुद्सी जमाअत के थे जिसे अल्लाह तआला ने अपने आख़िरी नबी सैयदना मुहम्मद रसूलुल्लाह (स०अ०व०) की सोहबत व रफ़ाक़त और उनके साथ जिहाद व कुर्बानी के लिए तैयार की थी और अल्लाह तआला ने कुरआन मजीद में बहुत सी जगह इनके उन औसाफ़ का ज़िक्र किया है और उनको अपनी रज़ामन्दी का परवाना दिया है:

"अल्लाह उनसे राज़ी हुआ और वह अल्लाह से राज़ी हुए और अल्लाह ने उनके लिए ऐसी जन्नतें तैयार कर रखी हैं जिनके नीचे नहरें जारी हैं, उसी में वह हमेशा रहेंगे, यही बड़ी कामयाबी है।" (सूरह तौबा: १००)

दर हक़ीक़त सहाबा (रज़ि०) से मुहब्बत रसूलुल्लाह (स०अ०व०) से मुहब्बत है और अल्लाह की रज़ा का सबब और आख़िरत में अच्छे अंजाम का ज़रिया है। यह रिजाल हैं लेकिन हमारी और आपकी तरह नहीं, रसूलुल्लाह (स०अ०व०) की सोहबत व रफ़ाक़त ने उनको कहीं से कहीं पहुंचा दिया था।

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद वाज़ेह रशीद हसनी नदवी (रह०)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक: 07 जूलाई २०२४ ई० वर्ष: 16

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

मुद्रक

मो० हसन नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

अज़मत-ए-सहाबा का तक़ाज़ा

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"जब सहाबा का ज़िक्र आये तो ठहर जाओ।"

(अलमअजम अलकबीर लिलतिबरानी: 2/96)

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी० 229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

नामूस-ए-सहाबा

رضي الله عنهم

जनाब वाली आसी मरहूम

दुनिया से यही रख़्ते सफ़र लेकर चले हैं
हम उल्फ़ते सिद्दीक़ (रज़ि0) व उमर (रज़ि0) लेकर चले हैं

है पेशे नज़र सीरते उस्मान (रज़ि0) व अली (रज़ि0) भी
हो शाम न जिसकी वह सहर लेकर चले हैं।

हमराह लिये सौर की जानिब शबे हिजरत
सिद्दीक़ (रज़ि0) को ख़ुद ख़ैरे बशर (स0अ0व0) ले के चले हैं

इन्साफ़ ने वह अद्ल कभी फिर नहीं देखा
आइने अदालत जो उमर (रज़ि0) ले के चले हैं

वल्लाह अजब शान है उस्माने ग़नी (रज़ि0) की
दुनिया से यह फ़िरदौस में घर ले के चले हैं

कहता है अली (रज़ि0) शेरे ख़ुदा जिनको ज़माना
वह नुसरते ख़ैबर की ख़बर ले के चले हैं

सीने से लगाई हुई नामूसे सहाबा (रज़ि0)
इस राह में नज़राना-ए-सर ले के चले हैं

कुछ हम पे है उनका करम ख़ास भी वाली
कुछ अपनी दुआओं में असर ले के चले हैं

इस अंक में:

नुबूव्वत-ए-मुहम्मदी का अक्स-ए-जमील...........................3

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सहाबा किराम व शेख़ैन – ग़ैर मुस्लिम फ़ुज़्ला की शहादतें....4

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

इन्सानी तारीख़ की बेनज़ीर क़ुद्सी जमाअत...........................6

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

सहाबा का मक़ाम-ए-इम्तियाज़.....................................8

हज़रत मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह0)

ज़िन्दगियां सहाबा की...9

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

तक़वा क्या है?...11

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

शहादत-ए-हुसैन का पैग़ाम..13

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

हज़रत हुसैन (रज़ि0) की शहादत...................................15

मुहर्रमुल हराम और ताज़ियादारी – इमामों और बुज़ुर्गों के फ़तवे...17

अज़मत-ए-सहाबा (रज़ि0)..19

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

सम्पादकीय

नुबूव्वत-ए-मुहम्मदी का अक्स-ए-जमील

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

जिस तरह नुबूव्वत एक इम्तियाज है और यह उम्मत का अक़ीदा है कि न कोई फ़रिश्ता यह मक़ाम पा सकता है और न कोई वली, यह वह आसमान है कि कोई इसकी बुलन्दी को नहीं छू सकता, किसी मोमिन का ईमान मोतबर नहीं जब तक कि वह अम्बिया (अलैहिस्सलाम) की नुबूव्वत पर ईमान न रखता हो, इसी तरह नुबूव्वत के बाद शर्फ़े सहाबियत भी वह मक़ाम है जहां तक किसी बड़े से बड़े वली की रसाई नहीं। बहैसियते सहाबी–ए–रसूल के हर एक का मर्तबा नुबूव्वत के नीचे है, लेकिन विलायत से बुलन्द है। अल्लाह तबारक व तआला ने हर–हर सहाबी को ईमान की जो गहराई अता की, यह शर्फ़ सिर्फ़ सोहबते रसूल (स0अ0व0) का ख़ास्सा है, किसी ग़ैर सहाबी को यह हासिल नहीं हो सकता और इस ईमान के बाद बहुत से मामूली अमल बड़े–बड़े आमाल पर भारी हैं।

वाक़्या यह है कि यह वह जमाअत थी जिसको अल्लाह तआला ने अपने नबी के लिए मुन्तख़ब फ़रमाया था और यह आप (स0अ0व0) के वह शार्गिद थे जिनको सारी उम्मत का मुअल्लिम बनना था, उम्मत को जो भी दीन व कुरआन हासिल हुआ, वह उसी कुद्सी जमाअत की वजह से हासिल हुआ। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने सहाबा (रज़ि0) की इस अंदाज़ में तरबियत फ़रमाई थी कि वह दीन को हज़्म कर चुके थे और उन्होंने दीन को अपने अन्दर पूरी तरह से जज़्ब कर लिया था, वह दीन के ऐसे तरजुमान बनकर सारे आलम में फैले कि जहां–जहां भी वह दीन व दावत का पैग़ाम लेकर गए, वहां की दुनिया बदल गई। मानो ऊंटो और जानवरों के चराने वाले आलम के निगेहबान वह गिलेबान बन गए। ज़ाहिर है यह सब अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) की मुबारक तरबियत और आपकी मुबारक सोहबत का नतीजा था कि एक नज़र में उनकी दुनिया बदल गई और वह कहीं से कहीं पहुंच गए। उन्होंने अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) की ज़िन्दगी का ऐसा अक्स कुबूल किया कि अल्लाह तआला ने उसकी गवाही कुरआन मजीद के अन्दर दी, इरशाद हुआः

"अल्लाह उनसे राज़ी हुआ और वह अल्लाह से राज़ी हुए।"

अल्लाह तबारक व तआला अल्लामुलग़ुयूब है, वह दिलों का जानने वाला है, वह ख़ूब जानता था कि सहाबा किस तर्ज़ पर रहेंगे और किस दीन व अक़ीदा पर क़ायम रहेंगे, इसीलिए कुरआन मजीद में बेशुमार मौक़ों पर सहाबा किराम (रज़ि0) के ईमान व तक़्वे की गवाही दी है।

हैरत की बात है कि आजकल बाज़ लोग ईमान का मुज़ाहिरा करते हैं लेकिन उनके अन्दर सहाबा (रज़ि0) के मुताल्लिक़ बुग़्ज़ भरा हुआ है। याद रहे! यह अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) के सहाबा, आप के लिए अपनी जानों का नज़राना पेश करने वाले, अपना घर लुटा देने वाले हैं। अगर कोई शख़्स उनके बारे में उठाता है वह गोया अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) पर उंगली उठाता है, गोया वह यह कहता है कि हुज़ूर (स0अ0व0) को तरबियत करनी नहीं आती थी। इसलिए अगर कोई ईमान वाला सहाबा किराम (रज़ि0) के बारे में ग़लत ख़्याल करता है, या अपनी ज़बान से कोई ग़लत बात कहता है तो वह याद रखे कि उसका ईमान ख़तरे में है। आप (स0अ0व0) का इरशाद है कि सहाबा की मुहब्बत ईमान की अलामत है और सहाबा से बुग़्ज़ व नफ़रत इस बात की अलामत है कि वह शख़्स मुनाफ़िक़ है और मुनाफ़िक़ वह शख़्स होता है जो अपने आप को मुसलमान कहे लेकिन उसके अन्दर कुफ़्र व बुग़्ज़ भरा हुआ हो। इसलिए हर साहिबे ईमान को समझना चाहिये कि हज़रात–ए–सहाबा (रज़ि0) से बुग़्ज़ रखना, या उनको बुरा–भला कहना निफ़ाक़ व कुफ़्र की अलामत है और यह निफ़ाक़ व कुफ़्र की इन्तिहाई बदतरीन शक्ल है।

सहाबा किराम व शेख़ैन
ग़ैर मुस्लिम फुज़्ला की शहादतें

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

सहाबा किराम व शेख़ैन के बारे में दर्ज ज़ेल सुतूनों के अन्दर हम चन्द ग़ैरमुस्लिम फ़ुज़्ला और मुस्तनद मुअर्रिख़ों की शहादतें नक़ल करते हैं।

मग़्रिबी फ़ाज़िल कायनाती अपनी किताब "सिनीने इस्लाम" में कहता हैः

"यह लोग रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की अख़्लाक़ी विरासत के सच्चे नुमाइन्दे, मुस्तक़बिल में इस्लाम के मुबल्लिग़ और मुहम्मद (स0अ0व0) ने ख़ुदा रसीदा लोगों तक जो तालीमात पहुंचाई थीं उसके अमीन थे, रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की मुसलसल कुरबत और उनसे मुहब्बत ने उन लोगों को फ़िक्र व जज़्बात के एक ऐसे आलम में पहुंचा दिया था जिससे आला व मुतमद्दिन माहौल किसी ने नहीं देखा था।

दर हक़ीक़त उन लोगों में हर लिहाज़ से बेहतरीन तग़य्युर हुआ था और बाद में उन्होंने जंग के मौक़े पर मुश्किल तरीन हालात में इस बात की शहादत पेश की कि मुहम्मद (स0अ0व0) के उसूल व अफ़कार की तख़्मरेज़ी ज़रख़ेज़ ज़मीन में की गई थी, जिससे बेहतरीन सलाहियतों के इन्सान वजूद में आए, यह लोग मुक़द्दस सहीफ़े के अमीन और उसके हाफ़िज़ थे और रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से जो लफ़्ज़ या हुक्म उन्हें पहुंचा था, उसके ज़बरदस्त मुहाफ़िज़ थे। यह थे इस्लाम के क़ाबिले एहतिराम पेशरो जिन्होंने मुस्लिम सोसाइटी के अव्वलीन फ़ुक़्हा, उलमा और मुहद्दिसीन को जनम दिया।" (तमद्दुन–ए–अरबः 124)

मशहूर फ़्रांसीसी लेखक डॉक्टर लीबान अपनी मशहूर किताब "तमद्दुने अरब" में लिखता हैः

"ग़रज़ यह है कि इस नये दीन को बेहतरीन मौक़े दरपेश थे और बेशक वह असहाबे नबी (स0अ0व0) की ख़ुश तदबीरी थी जिसने उन्हें उन मौक़ों पर कामयाब किया, उन्होंने ख़िलाफ़त के लिए ऐसे ही लोगों को चुना जिनकी सारी ग़रज़ अशाअते दीने मुहम्मदी थी।" (तमद्दने अरबः 384–385)

मशहूर अंग्रेज़ लेखक एडवर्ड गिब्बन ख़ुल्फ़ाए राशिदीन के बारे में अपनी किताब "ज़वाल व सुक़ूते रोमा" में लिखता हैः

"पहले चार ख़ुल्फ़ा के अतवार साफ़ और ज़रबुल मिस्ल थे, उनकी सरगर्मी, दिलदही इख़्लास के साथ थी और सरवत व अख़्तियार पाकर भी उन्होंने अपनी उम्रें अदाए फ़राएज़े अख़्लाक़ी और मज़हबी में सर्फ़ कीं।" (तमद्दुने अरबः 384–385)

डॉक्टर फ़िलप हिट्टी अपनी मशहूर किताब "मुख़्तसर तारीख़े अरब" में लिखता हैः

"अबूबक्र (रज़ि0) मुरतदीन को मग़्लूब करने वाले और जज़ीरतुल अरब को इस्लाम के झंडे के नीचे मुत्तहिद करने वाले, एक सीधी साधी ज़िन्दगी गुज़ारते थे जो मतानत व वक़ार से भरी हुई थी, वह अपनी ख़िलाफ़त की मुख़्तसर मुद्दत के पहले छः महीने में रोज़ाना अपनी क़यामगाह "सुनह" से जहां वह अपने मुख़्तसर ख़ानदान के साथ एक मामूली से मकान में रहते थे, सुबह अपने दारुलहुकूमत मदीना की तरफ़ आते थे, वह हुकूमत से कोई तनख़्वाह नहीं लेते थे, इसलिए कि उस वक़्त हुकूमत की कोई आमदनी नहीं थी जो क़ाबिले ज़िक्र हो, वह हुकूमत के तमाम काम मस्जिद–ए–नबवी (स0अ0व0) के सहन में बैठकर अन्जाम देते थे।

उनके बासलाहियत जानशीन उमर (रज़ि0) (634–644 ईसवी) सादा ज़िन्दगी बसर करने वाले और बहुत फ़अ्आल थे। लम्बा क़द, मज़बूत जिस्म और सर के बाल गिर गए थे। ख़लीफ़ा होने के बाद कुछ अरसा तिजारत उनका ज़रिया–ए–मआश थी और बिल्कुल बद्दू सरदारों की तरह उनकी ज़िन्दगी शान व शौक़त और बड़ाई के मुज़ाहिरे से दूर थी। उनका बेदाग़ किरदार उनके जानशीनों के लिए एक मिसाल था, बतलाया जाता है कि उनके पास सिर्फ़ एक क़मीज़ और एक लबादा था जिस पर पेबन्द लगे हुए थे, खजूर की छाल भरे हुए बिस्तर पर सोते थे और उन्हें दीन की पासदारी, इन्साफ़ और हुकूमत को इस्लाम और अरबों

के लिए महफ़ूज़ रखने के अलावा और किसी बात की ज़िक्र नहीं थी।"

(मुख़्तसर तारीख़–ए–अरबः 175–176)

सर विलियत म्यूर अपनी मशहूर किताब "तारीख़–ए–ख़िलाफ़त–ए–ऊला" में लिखते हैंः

"अबूबक्र (रज़ि0) के दरबार की सादगी का वही आलम था जो मुहम्मद (स0अ0व0) की ज़िन्दगी में था। न ख़ुद्दाम थे और न मुहाफ़िज़ और न हुकूमत की शान व शौक़त ज़ाहिर करने वाली कोई और शय। अबूबक्र (रज़ि0) मेहनत के आदी थे और ऐसे बहुत से वाक़्यात मिलते हैं जिससे ज़ाहिर होता है कि मामलात की जुज़्ईयात पर भी नज़र रखते थे। रातों को वह मुसीबत ज़दह और ग़रीब की तलाश में घूमते रहते। हुकूमत के उम्माल और आला हुक्काम को तैनात करने में कुन्बा परवरी या तरफ़दारी से बालातर थे और उनके किरदार से अक़्ल व दानिश का इज़हार होता है।" (तारीख़े ख़िलाफ़ते ऊलाः 123)

वह आगे लिखते हैंः

"रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के बाद से सल्तनते इस्लाम में सबसे बड़े शख़्स उमर (रज़ि0) थे क्योंकि उन्हीं की दानाई, इस्तक़लाल का समरा था कि इस दस साल की मुद्दत में शाम, मिस्र, फ़ारस के इलाक़े जिनपर उस वक़्त से इस्लाम का क़ब्ज़ा रहा है तस्ख़ीर हो गए, मगर बावजूद ऐसी अज़ीमुश्शान सल्तनत के फ़रमारवां होने के आपको कभी अपने फ़ैसले, फ़रासत और मतानत की मीज़ान में पासिंग रखने की ज़रूरत नहीं हुई। आपने सरदारे अरब के सादा और मामूली लक़ब से साथ अपने आप को मुक़ल्लब नहीं किया। दूर–दराज़ सूबों से लोग आते और मस्जिद–ए–नबवी (स0अ0व0) के सहन के चारों तरफ़ नज़र दौड़ाकर इस्तफ़सार करते कि ख़लीफ़ा कहां हैं? हालांकि शंहशाह यानि ख़लीफ़ा सादा लिबास में उनके सामने बैठे होते थे।"

मुस्तनद मुअर्रिख़ीन में सुन्नी फुज़्ला और मुसन्निफ़ीन के बजाए जस्टिस सैय्यद अमीर अली की किताब "ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ़ सारासेन्स" से शहादत मुलाहिज़ा हो, वह लिखते हैंः

"ख़ुल्फ़ा–ए–राशिदीन के ज़माने में मुसलमानों की जो सियासी हालत थी अगर उसका जाएज़ा लिया जाए तो जो मंज़र आंखों के सामने आता है वह एक अवामी हुकूमत का है जिसका सरबराह एक मुन्तख़ब शुदा अमीर था, जो महदूद अख़्तियार का मालिक था। रईसे मुम्लकत के ख़ुसूसी अख़्तियारात इन्तिज़ामी एहतिमामी उमूर के दायरे के अन्दर महसूर थे। क़ानून सबके लिए एक था, अमीर के लिए भी और ग़रीब के लिए भी, साहिबे इक़्तिदार के लिए भी और खेत पर मेहनत व मशक़्क़त करने वाले के लिए भी।"

वह आगे लिखते हैंः

"ख़ुल्फ़ाए राशिदीन ने जिस सख़्तगीरी से अपने आप को अवाम की भलाई के लिए वक़्फ़ कर रखा था और जिस इन्तिहाई सादगी से वह ज़िन्दगी बसर करते थे, वह हादी–ए–इस्लाम की मिसाल की पूरी–पूरी तक़लीद थी, उन्होंने ख़दम व चश्म और ज़ाहिरी शान व शौकत के बग़ैर महज़ अपने हुस्ने किरदार और सीरत की मदद से लोगों के दिलों पर हुकूमत की।" (माख़ूज़ अज़ः रूहे इस्लामः 433)

जहां तक हज़रात शेख़ैन का ताल्लुक़ है ता सैय्यद अमीर अली ने उनकी ज़ाहिदाना तर्ज़े ज़िन्दगी के मादलत शेआरी और उनकी ख़िदमात और एहसानात का पूरी फ़राख़दिली और ज़ोरे क़लम के साथ एतराफ़ किया है। हज़रत अबूबक्र (रज़ि0) के बारे में लिखते हैंः

"अबूबक्र (रज़ि0) अपनी दानिशमंदी और एतदाल की वजह से इम्तियाज़े ख़ास के मालिक थे, उनके इन्तिख़ाब को हज़रत अली (रज़ि0) और ख़ानदाने नुबूव्वत ने अपने रवायती ख़ुलूस और इस्लाम के साथ वफ़ादारी और दिली वाबस्तगी की बिना पर तस्लीम किया।" (ऐ शार्ट हिस्ट्री ऑफ़ सारासेंसः 21)

हज़रत उमर (रज़ि0) के बारे में इज़हारे ख़्याल करते हुए लिखते हैंः

"हज़रत उमर (रज़ि0) की जांनशीनी इस्लाम के लिए बड़ी क़द्र व क़ीमत की हामिल थी, वह अख़्लाक़ी तौर पर एक मज़बूत तबियत व सीरत के आदमी, इन्साफ़ के बारे में बड़े बाउसूल और हस्सास, बड़ी क़ूव्वते अमल और सीरत की पुख़्तगी के आदमी थे।" (ऐ शार्ट हिस्ट्री ऑफ़ सारासेंसः 27)

यादगार महीना

मुर्शिदुल उम्मत हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (रह0)

कुरआन मजीद और रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की सोहबत से सहाबा किराम में ईमान व इताअते एहकामे इलाही का ऐसा मिज़ाज बन गया था जैसा फ़ितरते इन्सानी में पैदाइशी तौर पर होता है कि उनसे ईमान की कमज़ोरी या इताअत में कोताही की गुंजाइश नहीं रहती थी, उनकी तरफ़ से कामिल इताअत का जुहूर सख़्त से सख़्त मौक़े पर और उनको ईमान और इताअते रसूल (स0अ0व0) के कई सख़्त इम्तिहानों से गुज़रना पड़ा और वह उन सब में कामयाब हुए, जिसके तीन नमूने सबसे ज़्यादा सख़्त रहे;

एक बदर का मारका कि मुसलमानों को अपनी तादाद की कमी का पूरा एहसास था और तदबीरे जंग के लिहाज़ से अपनी नाकामी और शिकस्त का पूरा ख़तरा महसूस हो रहा था और इस जंग से बचने का मौक़ा भी था कि यह मशवरा देते कि मदीना लौट जाएं, वहां मज़बूती रहेगी, लेकिन अपने नबी की बात मानी और शिकस्त का ख़तरा होते हुए भी तैयार हो गए।

दूसरा बड़ा इम्तिहान ख़न्दक़ का मारका था जहां आधे महीने निहायत हिम्मत तोड़ने वाले हालात में मैदाने जंग में डटे रहने का इम्तिहान था, जिसकी सख़्ती का ज़िक्र खुद कुरआन मजीद में है।

इस तरह आप (स0अ0व0) के सहाबा किराम की जो जमाअत बनी, वह ईमान और मुहब्बते रसूल और आपके लाए हुए दीने इस्लाम की पैरवी में नाक़ाबिले तस्ख़ीर पहाड़ की तरह थी और बतदरीज इतनी बड़ी तादाद में यह जमाअत तैयार हुई कि तारीख़े इन्सानी में ऐसी सालेह और पुख़्ता ईमान और दीन में पुख़्तगी की कोई मिसाल नहीं मिलती और यह दरअस्ल अल्लाह तआला की तरफ़ से था, जिसने यह फ़ैसला किया कि आपके बाद किसी नबी के आने की ज़रूरत नहीं और आपकी सोहबत और रहनुमाई हासिल करने वालों की जमाअत को ऐसे सिफ़ात और किरदार का बना दिया कि वह नुबूव्वत की सही नयाबत करते हुए इस दीन को और आला इन्सानी सिफ़ात को आगे बढ़ाएं, इसके अफ़राद में हर एक अपनी जगह आफ़ताब व माहताब था और आपने उनके बारे में बारे में यह तस्दीक़ भी की थी, फ़रमायाः

"मेरे असहाब सितारों की तरह हैं, उनमें से जिसकी इत्तेबा करोगे हिदायत पर रहोगे।"

सबसे बड़ी बात यह कि कुरआने मजीद ने उनके मक़बूले बारगाह होने की तस्दीक़ की, फ़रमायाः

"मुहम्मद (स0अ0व0) अल्लाह के रसूल हैं और जो लोग उनके साथ हैं व इनकारियों पर ज़ोर आवर हैं, आपस में मेहरबान हैं, आप उन्हें रुकूअ और सज्दा करते देखेंगे, अल्लाह का फ़ज़्ल और ख़ुशनूदी चाहते हैं, उनकी अलामतें सज्दों के असर से उनके चेहरों पर नुमायां हैं, उनकी यह मिसाल तौरात में है और इन्जील में उनकी मिसाल यह है जैसे खेती हो जिसने अंखुआं निकाला फिर उसको मज़बूत किया फिर वह मोटा हुआ फिर अपने तने पर खड़ा हो गया, खेती करने वालों को भाने लगा ताकि वह उनसे इन्कार करने वालों को झल्ला दे, उनमें से जो ईमान लाए और उन्होंने अच्छे काम किये और उनसे अल्लाह ने मग़्फ़िरत और अज्रे अज़ीम का वादा कर रखा है।" (सूरह फ़तेहः 29)

इस आयत की रौ से सारे सहाबा किराम मक़बूले बारगाहे इलाही हुए, अलबत्ता इस मक़बूलियत में तरतीब भी है, आप (स0अ0व0) से जो जितना ज़्यादा क़रीब रहा उसको उतनी ज़्यादा अव्वलियत हासिल हुई। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से सबसे ज़्यादा क़रीब हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि0) रहे कि जिनसे आपकी रफ़ाक़त और दोस्ती नुबूव्वत से पहले की थी, वह तक़रीबन आपके हम उम्र थे, सिर्फ दो–ढाई साल छोटे

थे, हुज़ूर (स0अ0व0) की वफ़ात के बाद इस दीने इस्लाम को क़ायम रखने और आगे बढ़ाने की ज़िम्मेदारी सबसे पहले आपको मिली और आप ख़लीफ़ा–ए–अव्वल हुए, फिर इसी तरतीब से आपके बाद तीन दीगर खुल्फ़ा हुए जो आपके सच्चे जानशीन हुए और खुल्फ़ा–ए–राशिदीन कहलाए। इन सबके ज़रिये ख़िलाफ़ते राशिदा यानि आला मेयार की ख़िलाफ़त का सिलसिला आप (स0अ0व0) की वफ़ात के बाद तीस साल तक जारी रहा और हुज़ूर (स0अ0व0) ने वही के ज़रिये जो अख़्लाक़ व सिफ़ात और ज़िन्दगी की मुख़्तलिफ़ ज़िम्मेदारियों में जो तरीक़े अमल अख़्तियार किया था और अपने सहाबा को उसकी तरबियत दी थी, उसके मुताबिक़ इस्लामी दस्तूरे हयात को सहाबा किराम (रज़ि0) के ज़रिये बेकम व कास्त जारी किया जाता रहा, जिसके ज़रिये आइन्दा के लिए एक आला नज़ीर बन गई और दीने सही का रास्ता रोज़े रोशन की तरह मुक़र्रर हुआ और बाद में आने वालों के लिए नमूना बन गया।

इस्लामी तालीमात में इन्सानी ज़िन्दगी की रिआयत का जो लिहाज़ रखा गया है उन सब का नमूना उन तीस सालों में आ जाता है। हज़रत अबूबक्र और उमर (रज़ि0) के ज़माने में इस्लामी इक़्तिदार में जो लोग थे वह सब हुज़ूर (स0अ0व0) के सोहबत याफ़्ता थे और ईमान में आला दर्जे पर थे, उन पर हुकूमत उन्हीं की सतह के लिहाज़ से रही। हज़रत उमर (रज़ि0) की ख़िलाफ़त के आख़िरी हिस्से में नई नस्ल आ गई थी, और दूसरे मुल्कों के नवमुस्लिम हज़रात जो ईमान के लिहाज़ से सहाबा किराम के दर्जे पर न थे वह भी ख़ासे आ गए थे, ऐसी सूरत में इस्लाम की तरफ़ से इजाज़त करदा रुख़्सत का अमल अख़्तियार करना क़रीने मस्लहत व हिकमत था, चुनान्चे हज़रत उस्मान (रज़ि0) ने इसको महसूस किया और इसको अख़्तियार किया और इसका ऐसे हालात में अख़्तियार करना बिल्कुल सही और निज़ामे हुकूमत के चलाने के लिए ज़रूरी था। इस तरह इस तीस साल की मुद्दत में भी सहाबा किराम (रज़ि0) का किरदार मिसाली और आसमानी तालीमात के ऐन मुताबिक़ रहा और इसमें ज़रा भी कमज़ोरी नहीं आई।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के साथ तेईस साला मुद्दत उनकी तरबियत व हिदायत में गुज़ारने के बाद आपके मोतमद तरीन असहाब को इस आला तरबियती अख़्लाक़ व हिकमत को अमल में लाने के लिए तीस साल की मुद्दत बतौर नमूना मिली, जिसमें हुज़ूर (स0अ0व0) के ज़माने में अख़्तियार करदा तरीक़ा–ए–अमल के ऐन मुताबिक़ काम अंजाम पाए और आइन्दा के लिए नमूना बना। हुज़ूर (स0अ0व0) के मोतमद तरीन खुल्फ़ा के निज़ाम व इन्सिराम की यह तीस साला मुद्दत ऐसी थी कि उसके इख़्तिताम पर नज़्म व इन्तिज़ाम संभालने का काम नई नस्ल तक बतदरीज मुन्तक़िल हुआ, जिसमें बराहरास्त हुज़ूर (स0अ0व0) की सरपरस्ती नहीं थी, लेकिन ऐन हुज़ूर (स0अ0व0) के ज़माने की अख़्तियार की हुई चीज़ों की तरह थी और यह दरअस्ल अल्लाह तआला की तरफ़ से ही इन्तिज़ाम था, वह यह कि दस साल वही–ए–इलाही के तहत ख़ुद हुज़ूर (स0अ0व0) के ज़रिये फिर तीस साल आप (स0अ0व0) के तरबियत याफ़्ता हज़रात के तहत गुज़रे और उन चालीस साल में दीने इस्लाम के मेयारी निज़ाम का नमूना सामने आ जाए और क़यामत तक उसी को सामने रखकर अमल की कोशिश की जाए, क्योंकि दीन मुकम्मल कर दिया गया था।

लिहाज़ा उसके मुकम्मल होने का नमूना क़यामत तक सामने रहे, अब इसमें किसी तरमीम नहीं पेश आना है, क़यामत तक इन्सानों की सलाह व फ़लाह के लिए वह बिल्कुल काफ़ी है, इसलिए कि वह अल्लाह रब्बुल आलमीन का दिया हुआ दीन है जो इन्सानों के मिज़ाज और ज़रूरतों को शुरू से आख़िर तक जानने वाला बल्कि बताने वाला है, इसी लिहाज़ से उनको मुकम्मल फ़रमा दिया गया और अल्लाह की तरफ़ से उसकी हिफ़ाज़त का वादा भी फ़रमा दिया गया है, इरशादे इलाही है:

"बिलाशुब्हा हम ही ने इस नसीहत (नामे) को उतारा है और यक़ीनन हम ही उसकी हिफ़ाज़त करने वाले हैं।" (सूरह हजर: 9)

सहाबा का मक़ाम-ए-इम्तियाज़

हज़रत मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह0)

इसमें कोई शुब्हा नहीं कि सहाबा किराम (रज़ि0) भी इन्सान थे और गुनाहों का सुदूर उनसे भी मुमकिन था बल्कि उस्वे की तकमील के लिए ज़रूरी और मेयारी तौबा, रुजूअ व इनाबत इलल्लाह के लिए लाज़मी था, जिन सहाबा से गुनाहों का सुदूर हुआ फिर उस पर जो उनको ख़लिश और अपने किये हुए पर जो नदामत हुई वह सिर्फ़ उन्हीं का हिस्सा है। माइज़ और ग़ामिदिया के वाक़्यात शाहिदे अद्ल हैं कि उनको अपने गुनाहों पर ऐसी नदामत हुई और इसके लिए उन्होंने ऐसी कुर्बानी दी कि रहमते इलाही को जोश आया और उन पर ऐसी रहमत की बारिश हुई कि अगर पूरा शहरे मदीना उसके ज़रिये अपनी बख़्शिश करवाना चाहता तो हो जाती।

यह वह बन्दा है जिस पर नाज़ करता है करम मेरा

अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) ने हद जारी करते वक़्त एक साहब के नाज़ेबा कलिमात सुनकर मना फ़रमाया और उनकी तौबा की कुबूलियत और उस पर अल्लाह तआला की मग़्फ़िरत व रहमत को इस तरह बयान फ़रमाया कि गोया रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने उनकी तौबा को मेयार क़रार दिया कि उन्होंने ऐसी तौबा की है कि अगर अहले मदीना पर तक़सीम कर दी जाए तो उन सबको अपने साये में ले ले। हज़रत अबू लबाबा से लग़्ज़िश हुई, मस्जिद के खम्बे से अपने को बांध दिया और एक हफ़्ता उसी तरह रहे यहां तक कि कुबूले तौबा का मज़दा सुना और परवाना–ए–रहमत पा लिया, ऐसा गुनाहगार बन्दा जो इस अंदाज़ की तौबा करने वाला हो तो वह तो महबूबे ख़ुदा बन जाता है।

वहशी जिनके सर पर हज़रत हम्ज़ा (रज़ि0) के क़त्ल का बोझ था, अगरचे उन्होंने कुफ़्र की हालत में ऐसा किया था फिर भी मारे शर्मिन्दगी व नदामत के अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) के सामने न आते थे। वह बोझ उस वक़्त उतरा जब उन्होंने मुसैलमा कज़्ज़ाब को जो दुश्मने ख़ुदा और रसूल था क़त्ल किया और मुसलमानों को बड़े इम्तिहान से बचा लिया। न जाने कितने वाक़्यात हैं जिनसे पता चलता है कि सहाबा से लग़्ज़िशें हुईं लेकिन उन पर उन्होंने नदामत के ऐसे आंसू बहाए और उसके कफ़्फ़ारे के लिए ऐसे मुजाहिदे किये कि क़यामत तक उम्मत के लिए नमूना छोड़ गए।

हमारा हाल यह है कि गुनाहों से आलूदा हैं, दिन–रात गुनाहों में पड़े रहते हैं, तौबा की तौफ़ीक़ भी नहीं होती, अगर हुई भी तो सिर्फ़ ज़बानी। ज़बान पर तौबा, हाथ में सब्हा और दिल में गुनाहों की ख़्वाहिश और शौक़। यह है हमारी कैफ़ियत, उस पर तुर्रा यह कि अपने गुनाहों का जवाज़ पैदा करने की तलाश में रहते हैं, बाज़ तो यह कहने लगते हैं कि सहाबा भी तो गुनाह करते थे, हम करते हैं तो क्या? वह तो ख़ैर का ज़माना था जब भी गुनाह होते थे तो यह शर और फ़ित्ने का ज़माना है, गोया सहाबा को अपने गुनाहों के लिए सनद और मेयार क़रार दिया जाता है हालांकि सहाबा (रज़ि0) ने गुनाह पर नदामत और शर्मसारी और उसके कफ़्फ़ारे के लिए जो मुजाहिदात और मशक़्क़तें उठाईं हैं, वह उसमें नमूना और मेयार हैं न कि गुनाह में। वह अनाबात इलल्लाह और रुजू–ए–इलल हक़ में उस्वा हैं न कि अपने गुनाहों पर इसरार करने और उसका जवाज़ ढूंढने में, इस तब्दीली को सहाबा किराम ने महसूस करते हुए अपने शागिर्दों के सामने यह बात कही कि तुम्हारा हाल यह है कि बड़े–बड़े गुनाहों को बस इतना समझते हो कि नाक पर मक्खी बैठी और उड़ गई, हम मामूली गुनाहों को भी हलाक और बर्बाद कर देने वाला समझते थे, जब तक तौबा न कर लेते चैन न आता था और इस तरह घबराए रहते थे कि पहाड़ हमारे सरों पर टंगा है जो गिरा ही चाहता है।

ज़िन्दगियां सहाबा की

मौलाना जाफ़र मसऊद हसनी नदवी

कुछ नमूना पेश है आज आपकी ख़िदमत में सहाबा किराम (रज़ि0) के कि कैसी थी उनकी ज़िन्दगियां? क्या थे उनके हालात? कितना था उनके यहां एहतिमाम इबादतों का? कितना था ख़्याल उनको सुन्नतों को अपनाने का? कितनी थी फ़िक्र उनको आख़िरत की और क्या हैसियत थी उनकी नज़रों में दुनिया की? एहतियात का उनके क्या आलम था? रज़ा–ए–इलाही का शौक़ उन पर कितना ग़ालिब था? सब्र उनका किस पाए का था? वादा–ए–ख़ुदावन्दी पर उन्हें कितना यक़ीन था? अज्र व सवाब के हुसूल का जज़्बा उन पर कितना तारी था? दिल उनके कितने साफ़ थे? ज़बान उनकी कितनी पाक थी? अज़ाएम उनके कितने बुलन्द थे? ख़्यालात उनके कितने आला थे? ज़िन्दगी उनकी कितनी सादा थी? नज़रें उनकी कितनी पाकीज़ा थीं? आख़िरत की फ़िक्र उप पर कितनी ग़ालिब थी? दुनिया का ख़ौफ़ उनपर कितना तारी था? अख़्लाक़ का उनके क्या आलम था? नियतों का उनकी क्या मेयार था?

बुज़ुर्गों की बुज़ुर्गी अपनी जगह, औलिया की विलायत का अपना मर्तबा और सहाबियत का शर्फ़ तो उसका कहना ही क्या? देखिये ज़बाने नुबूव्वत उनके बारे में क्या कहती है; "मेरे सहाबा सितारों की मानिन्द हैं उनमें से जिसकी भी पैरवी करोगे हिदायत पा जाओगे।"

"मैं नहीं जानता कि अब कितनी मुद्दत मुझको तुम्हारे बीच रहना है चुनान्चे मेरे जाने के बाद मेरे बाद आने वालों की इक़्तिदा करना (और आप (स0अ0व0) ने यह कहते हुए इशारा फ़रमाया हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि0) और हज़रत उमर (रज़ि0) की तरफ़) और अम्मार बिन यासिर के रास्ते पर चलना और अब्दुल्लाह बिन मसऊद जो कुछ तुमसे कहें उस पर यक़ीन करना।"

आइये! अब देखें किताबे इलाही सहाबा किराम (रज़ि0) के बारे में क्या कहती है? इरशादे ख़ुदावन्दी है:

"वह दूसरों को अपनी ज़ात पर तरजीह देते हैं, उनकी ज़रूरतों को अपनी ज़रूरतों पर मुक़द्दम रखते हैं चाहे उनका नुक़सान ही क्यों न हो।"

आइये! अब ईसार व क़ुर्बानी के एक–दो नमूने मुलाहिज़ा हों:

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि0) बीमार हैं, अंगूर खाने की ख़्वाहिश होती है, एक दिरहम में अंगूर का एक ख़ोशा (गुच्छा) ख़रीदकर लाया जाता है, हाथ में अभी वह ख़ोशा नहीं आने पाता कि एक साएल आ पहुंचता है, हुक्म होता है कि अंगूर का वह ख़ोशा साएल को दे दिया जाए।

हज़रत आयशा सिद्दीक़ा (रज़ि0) रोज़े से हैं, घर में सिर्फ़ एक रोटी है जो इफ़्तार के लिए बचाकर रखी गई है, दरवाज़े पर साएल सदा लगाता है, ख़ादिमा को हुक्म होता है कि रोटी उसको दे दी जाए, ख़ादिमा ने अर्ज़ किया कि आप रोज़े से हैं, सहरी भी बहुत मुख़्तसर थी, बग़ैर इफ़्तार के आप रात कैसे गुज़ारेंगी? हुक्म होता है फिर भी दे दो।

हज़रत अली (रज़ि0) कौन हैं? रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के चचाज़ाद भाई हैं, चहीते दामाद हैं, ईमान लाने वाले ख़ुशनसीब बच्चों की फ़ेहरिस्त में सबसे ऊपर आपका नाम है, लेकिन हाल फिर भी यह है कि रात के अंधेरे में और मस्जिद के एक कोने में तन्हाई की हालत में रब्बे करीम के सामने रोने–धोने का यह आलम है कि सुनने वाले का दिल फटा जाता है।

हज़रत तलहा (रज़ि0) अपने बाग़ में नमाज़ पढ़ रहे हैं, बाग़ इतना घना कि दिन में भी रात का गुमान, एक चिड़िया न जाने कैसे अंदर आ गई और ऐसी फंसी की फ़ड़फ़ड़ाती रही लेकिन निकल न सकी, चिड़िया के फड़फड़ाने से हज़रत तलहा (रज़ि0) की यकसूई में ख़लल पड़ा, नमाज़ में जो ख़ुशूअ हुआ करता था, उसमें कुछ फ़र्क़ आया, किसी तरह नमाज़ अदा की और फ़ारिग़ होते ही बाग़ यह कहकर सदक़ा कर दिया कि इसकी वजह से मेरी नमाज़ में ख़लल पड़ा।

उनकी इत्तेबा–ए–सुन्नत का नमूना मुलाहिज़ा हो:

मन्सबे ख़िलाफ़त संभालने के बाद हज़रत अबूबक्र (रज़ि0) ने जो ऐलान किये उनमें सबसे पहला ऐलान यह था कि मैं वही करूंगा जो आप (रज़ि0) करके दिखा गए या करने का हुक्म दे गए।

हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि0) के सामने जब कोई मामला पेश किया जाता और वाज़ेह तौर पर कोई नमूना इस सिलसिले में हयाते तैयबा का आप (स0अ0व0) के सामने न होता तो आप सहाबा किराम (रज़ि0) के पास तशरीफ़ ले जाते, एक–एक से मिलते और इस मामले के सिलसिले में नबवी तरीक़ा पूछते और जब आपके सामने इस सिलसिले में हुज़ूरे अक़दस (स0अ0व0) का तरीक़ा बयान किया जाता तो फ़रमातेः अल्लाह का शुक्र है कि हममें ऐसे लोग मौजूद हैं जो हमारे नबी मोहम्मद (स0अ0व0) की सुन्नतों के मुहाफ़िज़ हैं।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की मुहब्बत का यह नमूना भी मुलाहिज़ा कीजिएः

मुहाजिर बिन अबी उमैय्या मख़्ज़ूमी का एक ख़त हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि0) की ख़िदमत में पहुंचता है, ख़त का मज़मून कुछ इस तरह हैः

दो गाने वाली औरतों ने एक गाना गाया, उनमें एक ने अपने गाने में अश्आर के ज़रिये आक़ा–ए–नामदार हज़रत मुहम्मद (स0अ0व0) की शान में गुस्ताख़ी की, जबकि दूसरे ने अपने गाने में मुसलमानों को हुजू का निशाना बनाया। हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि0) ने अपनी नर्म मिज़ाजी और रहमदिली के बावजूद लिखा कि हुज़ूर (स0अ0व0) की शान में गुस्ताख़ी करने वाली बदज़ुबान औरत क़त्ल ही की मुस्तहिक़ थी और मुसलमानों को हुजू का निशाना बनाने वाली औरत माफ़ी की हक़दार थी।

ग़ज़वा–ए–उहद में हज़रत अबू दोजाना (रज़ि0) ने अपनी पीठ को रसूलुल्लाह (रज़ि0) के लिए ढाल बना दिया था, उनकी पीठ पर तीरों की बारिश होती रही लेकिन उन्होंने उसको जुम्बिश भी न होने दी।

उनकी एहतियात का आलम देखियेः

हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि0) गश्त फ़रमा रहे थे, रास्ते में आपका गुज़र ऊंटो की एक चारागाह से हुआ, एक ऊंट दूसरों के मुक़ाबले में कुछ ज़्यादा ही फ़रबा नज़र आया, पूछाः यह ऊंट किसका है? लोगों ने बतायाः आपके साहबज़ादे अब्दुल्लाह का। यह सुनना था कि आपके चेहरे का रंग बदल गया, फ़ौरन अब्दुल्लाह बिन उमर को तलब किया और उनसे पूछा कि यह ऊंट तुम्हारे पास कहां से आया? उन्होंने जवाब दियाः यह ऊंट मैंने ख़रीदा था, उस वक़्त यह कमज़ोर और लाग़र था। मैंने इसको चरागाह में दूसरे ऊंटों के साथ चरने भेज दिया, धीरे–धीरे यह फ़रबा होता गया, मेरा इरादा इसको बेचकर कुछ नफ़ा हासिल करना था, हज़रत उमर (रज़ि0) को यह सुनकर जलाल आ गया, आपने फ़रमायाः इस अवामी चरागाह में जब तुम्हारा ऊंट चरने के लिए आयेगा तो लोग यह सोचकर कि यह ख़लीफ़ा के साहबज़ादे का ऊंट है इसका ख़ास ख़्याल रखेंगे, पहले तुम्हारे ऊंट को चरने देंगे, पहले तुम्हारे ऊंट को पानी पिलाएंगे, इस तरह तुम्हारा ऊंट उनके ऊंटों से जल्दी फ़रबा होगा और इसकी क़ीमत उनके ऊंटों से ज़्यादा लगेगी। इसके बाद उन्होंने अपने साहबज़ादे को मुख़ातिब करते हुए कहाः

"ऐ अब्दुल्लाह! इस ऊंट को बेच दो, जितनी रक़म में तुमने इसे ख़रीदा था वह रक़म अपनी ले लो और बाक़ी ज़ाएद रक़म बैतुल माल में जमा कर दो क्योंकि वह तुम्हारा हक़ नहीं।"

ख़िदमत–ए–ख़ल्क़ का जज़्बा भी देखियेः

मदीना में एक बुज़ुर्ग और नाबीना ख़ातून अकेली रहती थीं, हज़रत उमर (रज़ि0) को एक बार यह ख़्याल आया कि उनके घर के कामों को अंजाम देने में उनकी मदद की जाए, लेकिन सुबह–सुबह वह जब उनके घर पहुंचे तो देखा कि घर की सफ़ाई–सुथराई हो चुकी है, पानी की मश्कीज़े भरे पड़े हैं, ज़रूरत के तमाम सामान अपने ठिकाने पर मौजूद हैं, उन्हें सख़्त हैरानी हुई कि सुबह से पहले यह काम कौन कर गया? बूढ़ी ख़ातून से पूछा तो वह बोलींः बेटा मुझे नहीं मालूम कौन ख़ुदा का बन्दा है जो तमाम काम फ़ज्र से पहले अंजाम दे जाता है। हज़रत उमर (रज़ि0) अगले रोज़ फ़ज्र से पहले बूढ़ी ख़ातून के घर पहुंचे तो मालूम हुआ कि अबूबक्र (रज़ि0) यह तमाम काम अंजाम देते हैं। तब हज़रत उमर (रज़ि0) ने कहाः अबूबक्र! ख़ुदा की क़सम मैं आपसे आगे नहीं बढ़ सकता।

तक़्वा क्या है?

सैय्यद बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

करामते इन्सानी का अस्ल मेयार:

{يَاأَيُّهَا النَّاسُ إِنَّا خَلَقْنَاكُم مِّن ذَكَرٍ وَأُنثَىٰ وَجَعَلْنَاكُمْ شُعُوبًا وَقَبَائِلَ لِتَعَارَفُوا إِنَّ أَكْرَمَكُمْ عِندَ اللَّهِ أَتْقَاكُمْ}

"ऐ लोगो! हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुम्हारे ख़ानदान और बिरादियां बना दीं ताकि एक-दूसरे को पहचान सको, बिलाशुब्हा अल्लाह के यहां तुममें बड़ा इज़्ज़तदार वह है जो तुममें सबसे बड़ा परहेज़गार हो।" (सूरह हुजूरातः 13)

बिलाशुब्हा यह एक बहुत अहम और बुनियादी पैग़ाम देने वाली आयत है, जिसमें करामते इन्सानी के अस्ल मेयार को वाज़ेह किया गया है और यह बात इरशाद फ़रमाई गई है कि हमने जो ख़ानदानी निज़ाम क़ायम किया है और लोगों को क़बीलों में बांटा है वह इसलिए ताकि एक-दूसरे को पहचानना आसान हो कि यह फ़लां ख़ानदान के हैं और यह फ़लां क़बीले के हैं, वरना पहचानने में दुश्वारी हो कि कौन कहां का है और किस जगह का है और किस ख़ानदान का है।

ख़ानदानी निज़ाम में ऊंच-नीचः

दुनिया के अन्दर ख़ानदानी निज़ाम में ऊंच-नीच पैदा कर ली गई है, वरना सच्ची बात यह है कि यह निज़ाम ऊंच-नीच के लिए नहीं है। ख़ासतौर से इस्लाम का मसावात का जो निज़ाम है वह शायद किसी दूसरे मज़हब में आसानी से नहीं मिलेगा, दुनिया के अन्दर जितने भी मज़ाहिब हैं उन तमाम मज़हबों में ख़ानदानी बुनियादों पर तफ़रीक़ की गई है। यह तफ़रीक़ यहूदियो के यहां बहुत ज़्यादा है, उनके यहां ख़ास ख़ानदान हैं जिन्हें शर्फ़ हासिल हो सकता है और वह शर्फ़ किसी दूसरे को हासिल नहीं हो सकता। इसी तरह हमारे यहां बिरादराने वतन की जो मज़हबी किताबें हैं, उनकी रौ से उनको चार ख़ानों में बांट दिया गया है, जिनमें शूद्र भी हैं और शूद्र का मतलब यह है कि जो बहुत ही बेचारे गिरे-पड़े लोग हैं, जिनको सिर्फ़ ख़िदमत के लिए ही पैदा किया गया है, वह कोई बड़ा काम नहीं कर सकते और किसी बड़े मन्सब पर फ़ाएज़ नहीं हो सकते, यहां तक कि उनके यहां यह बात कही जाती थी और अब भी मज़हबी एतबार से इसकी अहमियत है कि अगर शूद्र मज़हबी किताबें सुन लें तो उनके कानों में सीसा पिला दिया जाए और वह मन्दिरों में भी नहीं जा सकते। उनके यहां ऊंच-नीच का पूरा निज़ाम है, ख़ासकर उनके यहां पन्डित का जो मक़ाम है, वह कभी किसी का नहीं हो सकता, चाहे कोई कितनी ही मेहनत करे, कितनी ही रियाज़त करे, कितना ही इल्म में बढ़ जाए, कितना ही वह अपनी पूजा-पाठ में आगे बढ़ जाए, लेकिन वह पण्डित के मक़ाम को नहीं पहुंच सकता।

इस्लाम का दर्से मसावातः

ग़रज़ यह कि दुनिया की तमाम क़ौमों में तक़रीबन ऊंच-नीच का तसव्वुर है, लेकिन इस्लाम हमें मसावाते इन्सानी का दर्स देता है और यह बात फ़रमाता है किः

{إِنَّا خَلَقْنَاكُم مِّن ذَكَرٍ وَأُنثَىٰ وَجَعَلْنَاكُمْ شُعُوبًا وَقَبَائِلَ لِتَعَارَفُوا}

"हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुम्हारे ख़ानदान और बिरादरियां बना दीं ताकि एक-दूसरे को पहचान सको।"

दुनिया में आने वाले जितने भी इन्सान हैं, वह काले हों या गोरे, ठिगने हों या लम्बे, अक़्लमन्द हों या बेवकूफ़, पढ़े-लिखे हों या जाहिल, देहात के हों या शहर के, ग़रज़ कि जो भी हों वह इन्सान हैं तो आदम-हव्वा की औलाद हैं और इस हैसियत से वह

इन्सानी बिरादरी में शामिल हैं और एक इन्सान पर दूसरे इन्सान का बुनियादी हक़ है। आदमी किसी को समझता है कि वह किस काम के हैं, वह किस मस्रफ़ के हैं, वह जाहिल हैं, वह कुछ नहीं कर सकते, वह बरबाद हो जाएं, वह मर जाएं, वह ख़त्म हो जाएं, हमसे क्या लेना–देना, यह तसव्वुर ग़ैर शरई और ग़ैर इस्लामी तसव्वुर है जो इस वक़्त दुनिया में राएज है।

ख़ुदगर्ज़ी का दौरः

इस वक़्त ख़ुदगर्ज़ी का आलम यह है कि मुल्कों के लोग हों या ख़ानदानों के लोग हों, वह अपने ही दायरे को देखते हैं और अपने दायरे के जो लोग हैं उन्हीं के बारे में सोच सकते हैं, बाक़ी दायरे के बाहर के जो लोग वह उनको जानवर समझते हैं। ख़ास तौर पर यहूदियों का हाल तो यह है कि वह दुनिया के तमाम लोगों को जानवर समझते हैं, उनका मिशन यह है कि दुनिया के तमाम लोगों को ऐसा बना दिया जाए कि उनके अन्दर सर उठाने की सलाहियत ख़त्म हो जाए, वह सिर्फ़ ख़िदमत के लिए पैदा किये गये हैं और अपने बारे में उनका यह तसव्वुर है कि:

{نَحْنُ أَبْنَاء اللّٰهِ وَأَحِبَّاؤُهُ}

"हम अल्लाह के बेटे और उसके चहीते हैं।"

यहूद के यहां यह अजीब–ग़रीब ग़ैर इस्लामी तसव्वुरात हैं कि हम तो ख़ुदा के चहीते हैं और हमें तो आग छुएगी भी नहीं वग़ैरह।

दीन व शरीअत से यहूद का खिलवाड़ः

हक़ीक़त में यहूद भी नबियों के मानने वाले और सही दीन के हामिल हैं, अल्लाह तबारक व तआला ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को पैदा किया और उनकी औलाद में एक तरफ़ हज़रत इस्हाक़ को पैदा किया और दूसरी तरफ़ हज़रत इस्माईल को पैदा किया। यहूद हज़रत इस्हाक़ अलैहिस्सलाम की औलाद में से हैं, जिनके अन्दर बेशुमार अम्बिया किराम दुनिया में भेजे गए, इसके लिए अल्लाह तआला ने कुरआने मजीद में "تــترا"का शब्द इस्तेमाल फ़रमाया है कि मुसलसल, पै दर पै नबी आए, फ़रमाया:

{ثُمَّ أَرْسَلْنَا رُسُلَنَا تَتْرَا}

"फिर हमने मुसलसल रसूल भेजे।"

लेकिन यहूद ने नबियों के साथ बदसुलूकी की, किसी को क़त्ल किया और किसी को आख़िरी दर्जे तक पहुंचा दिया और जितनी भी गुस्ताख़ी मुमकिन है वह सब कर डाली, यहां तक कि बाज़ अम्बिया अलैहिस्सलाम को ज़िबह तक किया और उनके सरों पर आरे तक चला दिये। यहूदियों की यह तारीख़ रही है, उनके यहां यह तसव्वुर था कि हम नबियों की औलाद हैं और नबी हमारे दरमियान आते रहे हैं, इसलिए हमें जो मक़ाम मिला है वह मक़ाम दुनिया में किसी इन्सान को न मिला है न मिलेगा। इसीलिए सबसे ज़्यादा नस्ली तफ़ाउत यहूदियों के अन्दर ही पाया जाता है। यही वजह है कि उनका यह तसव्वुर भी था कि नबी उन्हीं में आएगा, दूसरों में नबी नहीं आयेगा, इसीलिए जब अल्लाह के नबी (स0अ0व0) तशरीफ़ लाए और तौरात की पेशीनगोइयों के मुताबिक़ उनको इसका यक़ीन भी था कि आप (स0अ0व0) अल्लाह के नबी हैं, तब भी उन्होंने यह कहकर साफ़ इन्कार कर दिया कि नबी तो बनू इस्हाक़ में आ सकता है, बनू इस्माईल में कहां से नबी आ गया? गोया यह उनका ठेका था। इसीलिए अल्लाह तआला ने कुरआन मजीद में यह बात इरशाद फ़रमाई है कि क्या वह अल्लाह की तरफ़ से मुतअयन हैं कि जिसको चाहेंगे उसको नबी बनाएंगे, अल्लाह ख़ूब जानता है कि वह पैग़म्बर कहां भेजे, वह कब से उसके ठेकेदार बन गए कि फ़लां क़ौमें में नबी आयेगा और फ़लां क़ौम में नहीं आएगा, फ़रमाया:

{اللّٰهُ أَعْلَمُ حَيْثُ يَجْعَلُ رِسَالَتَهُ}

"अल्लाह ख़ूब जानता है कि कहां किसको अपना रसूल बनाए।"

एक दूसरी जगह फ़रमाया कि नबी तो हर क़ौम में आए हैं:

{وَإِن مِّنْ أُمَّةٍ إِلَّا خلَا فِيهَا نَذِيرٌ}

"और कोई क़ौम ऐसी नहीं है जिसमें ख़बरदार करने वाला न गुज़रा हो।" अल्लाह तआला ने आख़िरी नबी को भी ख़ास तौर पर बनूइस्माईल में भेजा।

शहादत-ए-हुसैन का पैग़ाम

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

इच्छाएं जब दीन का चोला ओढ़ती हैं तो बिदअत का अस्तित्व होता है। इनका अगर गहराई से निरीक्षण किया जाए तो बिदआत के पीछे कुछ इस प्रकार की नफ़्सियात नज़र आती हैं, अल्लाह का दीन नाकाफ़ी है, अल्लाह का दीन मुश्किल है, अल्लाह का दीन अनावश्यक है।

पहली शक्ल सन्यास को जन्म देती है। दूसरी शक्ल इच्छापूर्ति, सुविधाओं की उपलब्धता और कर्म न करने की ओर ले जाती है, इसी से फिर मनुष्य तीसरी और अन्तिम अवस्था में पहुंचता है।

इस समय जो बिदआत चलन में हैं उसमें दूसरी सूरत अधिक कार्यरत है। क्योंकि मक्कार ज़हनियत दीन के नाम पर ही दीन से फ़रारी चाहती है। इसलिए दीनदारी के भरम को बाक़ी रखने के दावे पर छलावा देने वाली बिदअतें अस्तित्व में आती हैं जिसके परिणाम में पहले बद्दीनी और आख़िर में पूरी तरह बेदीनी ही आ जाती है। दीन सम्पूर्ण रूप रस्मों और ख़ुराफ़ातों का संग्रह बन जाता है। यहूदियों में रोग था जिसके कारण दीन उसी प्रकार इच्छाओं की भेंट चढ़ गया कि दीन के नाम पर इच्छा पूर्ति या सही शब्दों में पूरी तरह से नफ़्स परस्ती वजूद में आ गयी जिसके बाद फिर नबियों को झुठलाया जाने लगा और क़त्ल किया जाने लगा, कारण केवल यह था कि दीन को अपनी इच्छापूर्ति की भेंट चढ़ा दिया गया था।

"तो क्या ऐसा नहीं हुआ? कि जब भी तुम्हारे पास रसूल वह संदेश लेकर आए जो तुम्हारी नफ़्स की इच्छाओं के अनुसार नहीं होता तो तुम घमन्ड करने लगते (इसी का परिणाम था) एक वर्ग को झूठा घोषित कर दिया और एक वर्ग को क़त्ल भी करते थे।"

यहूदियों की सभी बिदअतों व ख़ुराफ़ातों का दरवाज़ा इसी विचार से खुला कि अल्लाह का दीन बहुत कठिन है। नसारा (ईसाई) बिल्कुल इसके उल्टे चले, उन्होंने अल्लाह के दिए हुए दीन को अपर्याप्त समझा, फिर ग़लत प्रकार के सन्यास के द्वारा दीन के नाम पर वे तमाशे किए कि न दीन के रहे और न दुनिया के रहे। स्वयं हज़रत ईसा अलै० के लाए हुए दीन को एक पहेली बना दिया। फिर इसी पहेली को दीन का आधार घोषित करके हमेशा के लिए सही दीन को खो दिया। ईसाईयत की गुमराही के पीछे यही विचार मिलेगा कि अल्लाह का दीन नाकाफ़ी है। क़ुरआन मजीद इसी को इस प्रकार बयान करता है:

"ऐ किताब वालो अपने दीन में ग़ुलू न करो, अल्लाह पर वही बात कहो जो सच है।"

और इसी से मिलता–जुलता मामला मुस्लिम उम्मत के बहुत से वर्गों के साथ हुआ। बहुतों ने जांबाज़ वाक़्यों को आधार बनाकर अपनी पूरी ज़िन्दगी को उनसे जोड़ दिया, इस तरह से वही अस्ल दीन बन गया। हद से बढ़े हुए दिखावे ने रस्म व रिवाज को बढ़ावा दिया। जिस दीन की बुलन्दी के लिए अहले बैत रसूलुल्लाह (स०अ०व०) ने अपने पूरे घराने को क़ुर्बान किया था उसी घटना को आधार बनाकर दीन को सही रुख़ से हटाने का प्रयास किया गया। उसके द्वारा सच्चाई, महानता व त्याग का जो सबक़ मिलता था उसको भुलाकर उसकी जगह रोना धोना, कम हिम्मती और लाचारगी का पाठ उम्मत को पढ़ाने लगे। यह ऐतिहासिक जुर्म लगातार होता रहा और उन श्रेष्ठ

आत्माओं की शहादत का अस्ल संदेश निगाहों से ओझल होता रहा।

हज़रत हुसैन (रज़ि0) की शहादत की घटना इतिहास के दिल का कारी ज़ख़्म है। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) का हर वफ़ादार व सच्चा उम्मती उसकी चोट अपने दिल पर महसूस करता है और इतिहास के उन मक्कार व धोखेबाज़ मुहब्बत का दम भरने वाले दावेदारों को माफ़ करने के लिए हरगिज़ तैयार नहीं जिन्होंने अपने घर बुलाकर उस महान अतिथि को शहीद कर डाला। इसी प्रकार वे सफ़्फ़ाक मुजरिम भी किसी तरह माफ़ी के क़ाबिल नहीं जिन्होंने ख़ानदान–ए–नबूवत के हंसते बसते घराने को उजाड़ने की कोशिश की और मासूम कलियों तक को मसल कर रख देने में कोई दर्द महसूस नहीं किया। बेग़ैरती की इतिहास में इससे बड़ी कोई मिसाल नहीं मिलती। उम्मत इस पर शर्मसार है। यह सारी बातें अपनी जगह ठीक हैं लेकिन क्या हज़रत हुसैन (रज़ि0) की शहादत का यही मक़सद था कि लोग रोने रुलाने, ताज़ियादारी और मातम को अपना अस्ल दीन बनाकर उस दीन को मिटा डालें जिसे आबाद करने के लिए इतनी बड़ी क़ुर्बान दी गयी? यह उनकी शहादत के साथ बड़ा ज़ुल्म है।

सच यह है कि हज़रत हुसैन (रज़ि0) से दीनी, रूहानी, जज़्बाती मुहब्बत रखने वाले हक़ व सच्चाई के ध्वजवाहक होते हैं। ताज़िये के अलमबरदार नहीं। वे जिगर का खून दे कर इस्लाम के गुलशन को सींचते हैं आंसुओं का ढोंग रचाकर नहीं। हुसैन से सच्ची मुहब्बत रखने वाले सुन्नते रसूल (स0अ0व0) के उजाले बिखेरते हैं, खुराफ़ात के अंधेरे नहीं।

अल्लाह तआला को अपना दीन बहुत प्यारा है। उसकी पूरी पैरवी का हुक्म खुद रसूलुल्लाह (स0अ0व0) को भी था:

"फिर हमने आपको इस दीन के ख़ालिस रास्ते पर मुक़र्रर कर दिया, आप इसी की पैरवी करें, उन लोगों की इच्छाओं की पैरवी न करें जो कुछ नहीं जानते।"

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने इस पाक अमानत को पूरी तरह से अपनी उम्मत तक पहुंचाया। इसीलिए अपना पाक ख़ून बहाया। रातों को उठ–उठ कर आंसुओं के नज़राने पेश किए, इस राह में बड़ी से बड़ी जो क़ुर्बानी हो सकती है वह दी, ख़ुद ही इरशाद फ़रमाते हैं:

(अल्लाह के रास्ते में जितना मुझे सताया गया किसी को नहीं सताया गया)

फिर हज़रात सहाबा किराम (रज़ि0) ने इस अमानत की रक्षा की। हज़रात ख़ुल्फ़ाए राशिदीन (रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के बाद इस्लामी साम्राज्य पर ख़िलाफ़त करने वाले पहले चार ख़लीफ़ा) इस अध्याय में सबसे श्रेष्ठ थे। सिद्दीक़–ए–अकबर (रज़ि0) हो या फ़ारूक़–ए–आज़म (रज़ि0), उस्मान–ए–ग़नी (रज़ि0) या अली–ए–मुर्तुज़ा (रज़ि0)। सहाबा किराम (रज़ि0) हो या अहले बैत (रज़ि0), (रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के ख़ानदान वाले) रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की पत्नियां (रज़ि0) हों या रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की बेटियां (रज़ि0) सबका मिशन यही था कि इस मुबारक दीन की शमा जलती रहे, यह चिराग़ कभी न बुझने पाए, इसी चिराग़ को रोशन करने के लिए हज़रत हुसैन (रज़ि0) ने अपने ख़ानदान वालों के साथ अल्लाह के दरबार में जान की क़ुर्बानी पेश की, फिर यही मुबारक दीन ताबईन, तबअ ताबईन, हज़रात–ए–मुहद्दिसीन, (हदीस के ज्ञानी) मुस्लहीन (सुधारक) व मुजाहिदीन (जिहाद करने वाले) के द्वारा हम तक पहुंचा और इसी दीन को बहुत से नादान और बेवकूफ़ बिदआत व खुराफ़ात के अंधेरे में ढकेलना चाहते हैं। नादान यह नहीं जानते के खुराफ़ात के ज़रिए तकलीफ़ पहुंच रही है। जिन मुबारक व पाक हस्तियों ने दीन व शरीअत, इस्लाम व ईमान, हक़ व सच्चाई के लिए अपना सब कुछ क़ुर्बान कर दिया था, क्या इन बिदआत व खुराफ़ात से वे खुश होंगे? अल्लाह ने समझ दी है उसकी रोशनी में ग़ौर किया जाए।

हज़रत हुसैन (रज़ि०) की शहादत

10/मुहर्रमुल हराम जुमा के दिन हज़रत हुसैन (रज़ि0) ने फ़ज्र की नमाज़ अदा की। आपके साथियों में बत्तीस सवार और चालिस प्यादे थे। हज़रत हुसैन (रज़ि0) अपने घोड़ों पर सवार हुए और फ़ौज को सम्बोधित करते हुए उन्हें याद दिलाने लगे कि वे कौन हैं, किसके नवासे और बेटे हैं और उनकी क्या हैसियत और मक़ाम है! वे कहते थे कि लोगों! अपने दिल को टटोलो और अपने ज़मीर से पूछो, क्या मुझ जैसे शख़्स से जंग करना जबकि मैं तुम्हारे नबी का नवासा हूं, ठीक है?

शिम्र अलजूशन की सेना में वे कूफ़ा वाले भी थे जिन्होंने हज़रत हुसैन (रज़ि0) को ख़त लिखे थे और आपको कूफ़ा आने की ज़ोरदार दावत दी थी। जब यह लश्कर (सेना) सामने आया तो हुसैन (रज़ि0) ने उन्हें पहचान लिया और उन कूफ़ियों को सम्बोधित करते हुए कहा:

"ऐ कूफ़ा वालों अफ़सोस है तुमपर! क्या तुम अपने ख़तों और अपने वादों को भूल गये, जो तुमने हमसे किये थे और तुमने उस पर ख़ुदा को गवाह बनाया था। अफ़सोस हाय अफ़सोस! तुमने अपने नबी के अहले बैत को बुलाया और यह वादा किया कि उनके लिये अपनी जानें न्यौछावर कर दोगे और जब तुम्हारे वादों पर भरोसा करके वे तुम्हारे पास आए तो तुमने उन्हें इब्ने ज़ियाद के हवाले कर दिया, जिसने उन पर फ़रात का पानी बन्द कर दिया। तुमने अपने नबी की औलाद के साथ बहुत ही घिनावनी बर्ताव किया है। क़यामत के दिन ख़ुदा तुम्हें भी प्यासा ही रखे।"

इसी बीच में शिम्र आगे बढ़ा और हज़रत हुसैन (रज़ि0) के काफ़िले पर हमले शुरू कर दिये। घमासान की जंग हुई। हज़रत हुसैन (रज़ि0) के जांनिसार एक-एक करके आप पर फ़िदा होते रहे। आप उनके लिये दुआ करते रहे और "जज़ाकुमुल लाह व अहसनल जज़ा अलमुत्तक़ीन" कहते रहे। आपके सामने धीरे-धीरे आपके साथी और ख़ानदान वाले शहीद होते रहे। आप अकेले बचे। लेकिन किसी की हिम्मत न थी कि आपका सामना करे। आप बड़ी देर तक मैदान में घूमते रहे लेकिन मुक़ाबले के लिये कोई आगे न बढ़ा। आख़िर में शिम्र ने कूफ़ा के योद्धाओं को ललकार कर कहा:

"अब हुसैन का काम तमाम करने में क्या इंतिज़ार है? आगे बढ़ो और उन्हें घेरे में लेकर हमला करो। वे चारों ओर से बढ़े। हज़रत हुसैन ने बहादुरी से मुक़ाबला किया, फिर ज़रआ बिन शरीक यतीमी ने लपक कर आपके कंधे पर वार किया, सनान इब्ने अनस ने नेज़े से हमले किये और फिर घोड़े से उतर कर सर-ए-मुबारक तन से जुदा कर दिया। (उन सब पर अल्लाह की लानत हो)

हज़रत हुसैन (रज़ि0) कर्बला के मैदान में जिस मज़लूमियत के साथ शहीद हुए वह इस्लामी इतिहास का एक काला अध्याय है और उसका कालापन शियों की काले स्वभाव का ही असर है। हज़रत हुसैन (रज़ि0) की शहादत और कर्बला के इस अलमनाक वाक़्ये की पूरी ज़िम्मेदारी कूफ़ा के शीयान-ए-हुसैन (रज़ि0) पर होती है जिन्होंने फ़ित्ने व फ़रेब के इरादे से आपको दावत दी फिर बहुत ही कमीनेपन, ख़यानतकारी, और बुज़दिली से आपका साथ छोड़ दिया। आपके ख़िलाफ़ तलवारें उठायीं और आपके और आपके साथियों के ख़ून से अपनी तलवारें लाल कीं।

इतिहास में सारी गवाहियां मौजूद हैं कि शियों ने किस तरह हज़रत हुसैन (रज़ि0) के साथ ग़द्दारी की और ख़ुद हज़रत हुसैन (रज़ि0) और उनके ख़ानदान के लोगों ने किस तरह उन शियों को लानत व मलामत की और उनसे बेज़ारी बल्कि नफ़रत का इज़हार किया।

जिन कूफ़ा वालों को हज़रत हुसैन को ख़त लिखे। उनसे वादे किये। उनके लिये क़समें खाईं और उनके

गले में अपनी बैत का तौक़ डालते हुए उनके साथ बेवफ़ाई की वे सब शिया ही थे। इसकी गवाही मशहूर शिया लेखक साहबे खुलासह अलमुसाएब ने दी है:

"अहले बैत को शहीद करने वालों में कोई शामी या हिजाज़ी नहीं था बल्कि सब के सब कूफ़ी थे।"

और कूफ़ा वालों के मज़हब की वज़ाहत काज़ी नूरुल्लाह शोस्तरी ने इस तरह की है:

"कूफ़ा वालों के शिया होने के लिये किसी दलील की ज़रूरत नहीं है, कूफ़ियों का सुन्नी होना ख़िलाफ़े अस्ल है जो मोहताजे दलील है।"

हज़रत हुसैन (रज़ि0) ने फ़रमाया: "खुदाया अगर तू उन्हें ज़िन्दा रख तो उन्हें टुकड़ियों में बांट के रख, उनके बीच फूट डाल दे, कभी शासकों को उनसे संतुष्ट न रख, उन्होंने हमें बुलाया था कि हमारी मदद करेंगे, मगर यह दुश्मनी पर उतर आए और हमारी जान के पीछ पड़ गये।"

एक दूसरे मौक़े पर शियों को बद्दुआ देते हुए कहा: "हमसे बैत करने के लिये तुम इस तरह लपके जैसे टिड्डियों के दल का दल टूट पड़े। तुम परवानों की तरह न्यौछावर हुए। फिर तुम्हीं ने बैत तोड़ भी दी। हलाकत हो, तबाही हो, बर्बादी हो उम्मत के इन फ़िरऔनों पर! बतिल की उन टुकड़ियों के उन पसमान्दा हिस्सों पर! किताबुल्लाह को पीठ पीछे डालने वालों पर! तुम्हीं हो जिन्होंने हमें बेयार व मददगार छोड़ दिया, हमें मौत के घाट उतारा, सुन लो! ज़ालिमों पर खुदा की लानत है!"

हज़रत ज़ैनुलआबदीन (रज़ि0) की गवाही: हज़रत ज़ैनुलआबदीन उस वाक़्ये के चश्मदीद गवाह हैं। वे कहते हैं: "क्या तुम्हें याद नहीं कि तुमने मेरे वालिद को ख़त लिखकर कूफ़ा बुलाया था। मगर तुमने धोखा दिया। उनसे वफ़ादारी का वादा किया मगर उन्हीं से लड़ बैठे। उनकी मदद से हाथ खींच लिया। अब तुम क्या मुंह लेकर रसूलुल्लाह (स0अ0) के पास जाओगे? जब आप (स0अ0) कहेंगे: तुमने मेरे घरवालों से लड़ाई की। मेरा अपमान किया। दफ़ा हो जाओ तुम लोग मेरी उम्मत के नहीं।"

जब इमाम ज़ैनुल आबदीन औरतों को साथ लेकर कर्बला तशरीफ़ लाए और वे बीमार थे तो उस समय कूफ़ा की औरतें और मर्द गिरेबां चाक, रो—पीट रहे थे। उस वक़्त इमाम ज़ैनुल आबदीन अपनी कमज़ोर आवाज़ में कहने लगे: "यह लोग रो रहे हैं हालांकि उनके अलावा किसी ग़ैर ने हमें क़त्ल नहीं किया।"

हज़रत ज़ैनब रह0 की गवाही: अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली रह0 की साहबज़ादी कूफ़ा वालों से कहती हैं: "ऐ कूफ़ा वालों! ऐ धोखे बाज़ों! मक्कारों और दग़ाबाज़ों! तुम्हारी मिसाल उस बुढ़िया की सी है जिसने बड़ी मेहनत से सूत काता मगर दूसरे ही लम्हे अपनी मेहनत ख़राब कर दी, ग़ुरूर व तकब्बुर, झूठ और मक्कारी के सिवा तुम्हारे अन्दर है ही क्या, तुम मेरे भाई पर मातम करते हो? हां करो, ख़ूब मातम करो, ख़ूब रोओ, हंसना तुम्हारे मुक़द्दर में न हो, तुम्हारे दामन पर दाग़ लग चुका है, ख़ानदान—ए—नुबूव्वत का ख़ून कब तक अरज़ा समझते रहोगे?!"

हज़रत फ़ातिमा सुग़रा रह0 की गवाही: "ऐ कूफ़ा वालों! ऐ ग़द्दारों! ऐ मक्कारों! ऐ घमन्डी इनसानों! तुम्हारी वजह से अल्लाह तआला ने हम अहले बैत को बहुत आज़माइश में डाला और तुम्हें हमारे ज़रिये आज़माया। हम तो आज़माइश में खरे उतरे। मगर तुम हमारे नाशुक्रे निकले और हमें झुठलाने लगे। तुमने हमसे जंग व क़िताल को जायज़ ठहराया। हमारे माल को तुमने लूट लिया। इसी तरह कल हमारे प्यारे दादा जी को भी तुमने क़त्ल किया था। तुम्हारी तलवारों से हमारा ख़ून अब भी टपक रहा है। हलाकत हो तुम्हारे लिये। खुदा की लानत और उसके अज़ाब का इंतिज़ार करो जो तुम पर आने ही वाला है। वह तुम्हारा शिराज़ा बिखेर कर तुम्हें आपस में लड़ा देगा। फिर क़यामत के दिन वह तुम्हें दर्दनाक अज़ाब से दो—चार करेगा उन ज़ुल्मों के बदले में जो तुमने हम पर किये हैं। सुन लो ख़ुदा की लानत हो ज़ुल्म करने वालों पर! ऐ कूफ़ा वालों! तुम्हारा बेड़ा ग़र्क़ हो।"

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि0) की गवाही: हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर फ़रमाते हैं: "इराक़ वाले मुझसे मक्खी मारने के बारे में फ़तवा पूछते हैं हालांकि उन्हीं लोगों ने रसूलुल्लाह (स0अ0) की बेटी के बेटे को क़त्ल किया है।"

मुहर्रमुल हराम और ताज़ियादारी इमामों और बुज़ुर्गों के फ़तवे

अल्लामा इब्ने तैमिया (रह0) का फ़तवा

आशूरा के दिन मातम व नौहा की बिदअत जो मुंह पीटने और वावेला मचाने और रोने–धोने और मर्सिया पढ़ने से मनायी जाती है। बुजुर्गों पर बदज़बानी और लानत मलामत यहां तक कि साबिकूनल अव्वलून दिशनाम वही तक कि की जाती है। (मिन्हाजुस्सुन्नहः 2/240)

हज़रत शेख़ अब्दुल क़ादिर जीलानी (रह0) का फ़तवा

अगर हज़रत हुसैन (रज़ि0) की शहादत वाले दिन को ग़म का दिन कहना जायज़ होता तो उससे कहीं ज़्यादा हक़दार दोशम्बे का दिन है। इसी दिन आप (स0अ0व0) और हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि0) ने वफ़ात पायी।

(ग़नीयतुत्तालिबीनः 2/72)

इमाम ग़ज़ाली (रह0) का फ़तवा

वाइज़ हो या कोई भी उसके लिये तन्हा हज़रत हुसैन (रज़ि0) की शहादत के वाक़्यात बयान करना हराम है। इसी तरह सहाबा (रज़ि0) में से जो आपसी इख़्तेलाफ़ हुआ उसको भी बयान करना ठीक नहीं है क्योंकि ये बातें सहाबा किराम (रज़ि0) के साथ बुग्ज़ पैदा करती हैं।

(अहयाउल उलूम)

हज़रत शाह वली उल्लाह मुहद्दिस देहलवी (रह0) का फ़तवा

ऐ बनी आदम! तूने ऐसी झूठी रस्में अपना ली हैं जिससे दीन बदल गया है। जैसे आशूरा के दिन जमा होकर बेकार की हरकते करते हो। एक जमाअत ने उस दिन को ग़म का दिन बना रखा है। क्या तुम नहीं जानते कि ये सब दिन अल्लाह के हैं और सारे हादसे अल्लाह की मशीअत से होते हैं। अगर हज़रत हुसैन (रज़ि0) इस रोज़ शहीद किये गये तो और कौन सा दिन है जिसमें अल्लाह के महबूब की मौत न हुई हो। (तजदीदे अहयाए दीनः 96)

शाह अब्दुल अज़ीज़ मुहद्दिस देहलवी (रह0) का फ़तवा

मुहर्रम की मजलिसो और ताज़िया की ज़ियारत और रोने धोने के लिये जाना ठीक नहीं। क्योंकि वहां कोई ज़ियारत नहीं होती और ताज़िये जो बनाये जाते हैं वे ज़ियारत के लायक़ नहीं बल्कि तोड़ कर फेंक देने के लायक़ हैं। (फ़तावा अज़ीज़ियाः जिल्द 1)

मौलाना अब्दुल हयि फ़िरंगी महली (रह0) का फ़तवा

ताज़िया बनाना, अलम रखना, सीना पीटना, मलीदा और शरबत ताज़िये के सामने रखना उस पर नज़र व नियाज़ देना और उसको तबर्रुक समझ कर खाना पीना ये सब काम बिदअत और मना हैं। इसका करने वाला फ़ासिक़ है। (फ़तावा अब्दुल हयिः 1/106)

मुफ़्ती किफ़ायतउल्लाह साहब (रह0) का फ़तवा

ताज़िया बनाना, उसकी ताज़ीम करना, उससे मन्नत व मुरादें मांगना, चूमना, अलम निकालना, दुलदुल बनाना, तख़्त उठाना, मेंहदी लगाना, मर्सिया पढ़ना, मातम और नौहा करना, छातियां पीटना ये सब काम नाजायज़ और हराम और शिर्क के बराबर हैं। शरीअते पाक में ऐसे कामों की इजाज़त नहीं। ये इस्लामी तौहीद और पैग़म्बर (स0अ0व0) की सही और सच्ची तस्वीर के ख़िलाफ़ है।

(किफ़ायतुल मुफ़्तीः 1/238)

हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी (रह0) का फ़तवा

ताज़ियादारी और मर्सिया पढ़ना ये तो पता नहीं कि शुरूआत किसकी है फिर भी तैमूर की तरफ़ निस्बत करते हैं। मगर रस्म शिया की है और बिदआत क़बीहा से है और अमसाले बिदआत में वारिद है।(इमदादुल फ़तावाः 5/294)

मुफ़्ती मुहम्मद हसन साहब गंगोही (रह0) का फ़तवा

मुहर्रम के महीने में ताज़िया अलम के साथ निकालना और उसके साथ मर्सिया पढ़ना और जुलूस के साथ शरीक होना और नज़्रे हुसैन की सबील निकालना, उसका पीना और पिलाना और उसको सवाब समझना, ये सारे काम बिदआत व नाजायज़ हैं और राफ़ज़ियों के काम हैं। उनमें शिरकत करना नाजायज़ है।

(फ़तावा महमूदियाः 1/188)

मुफ़्ती रशीद अहमद साहब का फ़तवा

मुहर्रम के दस दिनों में मुसलमानों की ज़्यादातर

संख्या मातम की मजलिस और ताज़िया का जुलूस देखने के इंतिज़ार में जमा हो जाती है। इसमें कई गुनाह हैं एक ये कि इसमें सहाबा और कुरआन के दुश्मनों के साथ शबी है। दूसरा गुनाह ये कि इससे इस्लाम दुश्मनों की रौनक़ बढ़ती है। दुश्मनों की रौनक़ बढ़ाना बहुत बड़ा गुनाह है। तीसरा गुनाह ये है कि जिस तरह इबादत को देखना इबादत है उसी तरह गुनाह को देखना भी गुना है।

(अहसनुल फ़तावाः 1/394)

अहमद रज़ा ख़ाँ साहब के फ़तवे

1– ताज़ियाए राइजा मुजम्मे बिदआत शनीया सई है। इसका बनाना, देखना जायज़ नहीं, और ताज़ीम व अक़ीदत सख़्त हराम व बिदअत है। अल्लाह तआला मुसलमान भाइयों को सीधी राह की हिदायत फ़रमाये। आमीन!

(फ़तावा रिज़वियाः 24/499)

2– ताज़िया मना है। शुरू में कुछ अस्ल नहीं और जो कुछ बिदआत उसके साथ की जाती हैं सख़्त नाजायज़ हैं।

(फ़तावा रिज़वियाः 24/499)

3– ढोल बजाना हराम और जिस रात का नाम ख़ुदाई रात उनमें बजाए इबादत के गुनाह और मासियत करना मानो गुनहा को माज़ अल्लाह इबादत ठहराना है और ये और ज़्यादा हराम है।(फ़तावा रिज़वियाः 24/491)

4– पाइक बनना नक़ल करना और बेहूदा बात है। फ़क़ीर बनकर बिना ज़रूरत भीख मांगना हराम है और ऐसों को देना भी हराम है। (फ़तावा रिज़वियाः 24/494)

5– मातम करना, छाती पीटना भी हराम है। अलम, ताज़िये, बाजे, खेल तमाशे, सब बेहूदा बिदअत और मना हैं।

(फ़तावा रिज़वियाः 24/496)

6– अलम, ताज़िये, मेंहदी, उनकी मन्नत, गश्त, चढ़ावा, ढ़ोल ताशे, मजीरे, मर्सिये, मातम, बनावटी कर्बला को जाना, औरतों का ताज़िये देखने को निकलना, सब बातें हराम व गुनाह, नाजायज़ व मना है।

(फ़तावा रिज़वियाः 24/498)

7– अलम, ताज़िया, बैरक़, मेंहदी, जिस तरह रायज हैं बिदअत हैं और बिदअत से शौकते इस्लाम नही होती। ताज़िये को मुश्किल कुशा यानि परेशानियों को दूर करने वाला समझना जिहालत पर जिहालत है और इसे मन्न्त जानना और हिमाक़त और न करने को नुक़सान की वजह समझना वहम है। मुसलमानों को ऐसी हरकत व ख़्याल से दूर रहना चाहिये। (फ़तावा रिज़वियाः 24/499)

8– ताज़िया नाजायज़ व बिदअत है और इसको बनाना गुनाह है और इस पर शीरीनी वग़ैरह चढ़ाना केवल जिहालत और इसकी ताज़ीम बिदअत और जिहालत है। और जो ताज़िये को नाजायज़ कहे उसकी वजह से उसे काफ़िर या मुरतद कहना बहुत बड़ा गुनाह है।

(फ़तावा रिज़वियाः 24/500)

9– आशूरा की रात को रोशनी करना बिदअत व नाजायज़ है।

(फ़तावा रिज़वियाः 24/501)

10– ताज़िया पर फ़ातिहा जिहालत, बेवक़ूफ़ी और बेकार है। (फ़तावा रिज़वियाः 24/501)

11– ताज़िया नाजायज़ है और ऐसी मजलिस में जिसमें माज़ अल्लाह अहले बैत की तौहीन हो हराम है और उसमें शिरकत करना नाजायज़ व हराम है।

(फ़तावा रिज़वियाः 24/507)

12– ऐसी मजलिसों में शरीक होना जिसमें मर्सिया इत्यादि होते हैं हराम है। (फ़तावा रिज़वियाः 24/509)

13– खिचड़े के बारे में लिखा है "हां जो उसे शरई तौर पर सही समझे वो ग़लत है।"

(फ़तावा रिज़वियाः 24/494)

14– ताज़िया बना कर निकालना, उसके साथ ढोल नक़्क़ारे बजाना, क़ब्र की सूरत बनाकर जनाज़े की तरह निकालना, उस पर फूल वग़ैरह चढ़ाना ये सब बातें नाजायज़ हैं। (फ़तावा रिज़वियाः 24/507)

15– ताज़िया जिस तरह रायज है ज़रूर बिदअते शनीआ है। जिस क़द्र बात सुल्तान तैमूर ने की कि रौज़ाए मुबाकर हज़रत इमाम (रज़ि0) की सही नक़ल, तस्कीन शौक़ को रखी वो ऐसी थी जिसे रौज़ाए मुनव्वरा व काबा मुअज़्ज़मा के नक़्शे उस वक़्त तक इतने हज्र में न था। अब बवजह शिया व शबीह इसकी भी इजाज़त नहीं। ये जो बाजे, ताशे, मर्सिये, मातम, बर्क़ परी की तस्वीरें, ताज़िये से मुरादें मांगना, उसकी मिन्नते मानना, उसे झुक–झुक कर सलाम करना, सजदा करना वग़ैरह बिदअत कसीरा इसमें में हो गयी है और अब इसी का नाम ताज़िया दारी है।

(फ़तावा रिज़वियाः 24/504)

16– मुहर्रम शरीफ़ में सोग करना हराम है।

(इरफ़ान–ए–शरीअतः 1/7)

17– मुहर्रम शरीफ़ में मर्सिया पढ़ने में शिरकत करना नाजायज़ है। (इरफ़ाने शरीअतः 1/16)

अज़मत-ए-सहाबा (रज़ि०)

मुहम्मद अरमुग़ान नदवी

बिलाशुब्हा हज़रात–ए–सहाबा किराम (रज़ि0) अम्बिया (अलैहिस्सलाम) के बाद इन्सानी तारीख़ की सबसे मोहतरम व बाबरकत जमाअत हैं, यह वह क़ुद्सी नुफ़ूस हैं जिन्होंने अम्बिया में सबसे अफ़ज़ल व महबूब नबी हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा (स0अ0व0) से बराहे रास्त कस्बे फ़ैज़ किया, ख़ुद को आपके दामने तरबियत से वाबस्ता किया, अपने अन्दर ईमान की चिंगारी को फ़िरोज़ा किया, यहां तक कि वह तारीख़े इन्सानी की सबसे मिसाली जमाअत क़रार पाए। अल्लाह तआला ने इन मुबारक नफ़्सों की ग़ैर मामूली रियाज़तों, क़ुर्बानियों और जांफ़िशानियों का यह सिला दिया कि उनके ईमान, उनकी इबादतों, उनके मामलों और उनकी ज़िन्दगियों को क़यामत तक तमाम अहले ईमान के लिए एक मेयार और नमूना बना दिया।

क़ुरआन में सहाबा (रज़ि0) के ईमान को मेयार बनाते हुए इरशाद हुआ:

{فَإِنْ آمَنُوا بِمِثْلِ مَا آمَنتُم بِهِ فَقَدِ اهْتَدَوا}

"तो अगर वह भी इसी तरह ईमान ले आएं जैसे तुम ईमान लाए हो तो वह राह पर आ गए।" (सूरह बक़रा: 137)

सहाबा किराम (रज़ि0) के तक़वे के मुताल्लिक़ गवाही देते हुए इरशाद हुआ:

{وَأَلْزَمَهُمْ كَلِمَةَ التَّقْوَىٰ وَكَانُوا أَحَقَّ بِهَا وَأَهْلَهَا}

"और अल्लाह ने उन (सहाबा रज़ि0) को परहेज़गारी की बात पर रखा और वह उसी के मुस्तहिक़ और उसके अहल थे।" (सूरह फ़तेह: 26)

अल्लाह तआला ने उनकी इबादतों को उस्वा बनाते हुए इरशाद फ़रमाया:

{رِجَالٌ لَّا تُلْهِيهِمْ تِجَارَةٌ وَلَا بَيْعٌ عَن ذِكْرِ اللَّهِ وَإِقَامِ الصَّلَاةِ وَإِيتَاءِ الزَّكَاةِ يَخَافُونَ يَوْمًا تَتَقَلَّبُ فِيهِ الْقُلُوبُ وَالْأَبْصَارُ}

"वह लोग जिनको तिजारत और ख़रीद–फ़रोख़्त अल्लाह के ज़िक्र से, नमाज़ क़ायम रखने और ज़कात देते रहने से ग़ाफ़िल नहीं करती वह उस दिन से डरते रहते हैं जिस दिन दिल और निगाहें उलट–पलट जाएंगी।" (सूरह नूर: 27)

अल्लाह तआला ने उनकी सहरखेज़ी को मेयार बनाते हुए फ़रमाया:

{تَتَجَافَىٰ جُنُوبُهُمْ عَنِ الْمَضَاجِعِ يَدْعُونَ رَبَّهُمْ خَوْفًا وَطَمَعًا}

"उनके पहलू बिस्तरों से अलग रहते हैं, वह अपने रब को ख़ौफ़ और उम्मीद से पुकारते रहते हैं।" (सूरह सज्दा: 16)

अल्लाह तआला ने सहाबा (रज़ि0) की अख़लाक़ी ज़िन्दगी को यूं बयान किया है:

{وَيُؤْثِرُونَ عَلَىٰ أَنفُسِهِمْ وَلَوْ كَانَ بِهِمْ خَصَاصَةٌ}

"और वह (दूसरों को) अपनी जानों पर मुक़द्दम रखते हैं चाहे वह ख़ुद तंगदस्ती का शिकार हों।" (सूरह हश्र: 9)

दीन व ईमान की ख़ातिर सहाबा (रज़ि0) की अनथक कोशिशों का ज़िक्र अल्लाह तआला ने इन अल्फ़ाज़ में फ़रमाया:

{إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَاجَرُوا وَجَاهَدُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ أُولَٰئِكَ يَرْجُونَ رَحْمَتَ اللَّهِ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَّحِيمٌ}

"यक़ीनन वह लोग जो ईमान लाए और वह जिन्होंने हिजरत की और अल्लाह के रास्ते में जिहाद किया, वही लोग अल्लाह की रहमत के उम्मीदवार होंगे और अल्लाह बहुत मग़्फ़िरत करने वाला निहायत रहम करने वाला है।" (सूरह बक़रा: 218)

हक़ीक़त में सहाबा किराम (रज़ि0) ही वह मुक़द्दस लोग हैं जिनके ईमान की गवाही अल्लाह ने क़ुरआन मजीद में बयान की है और उन्हें सौ फ़ीसद बरहक़

अहले ईमान बताया गया है, एक जगह इरशाद है:

{أُولَٰئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا لَّهُمْ دَرَجَاتٌ عِندَ رَبِّهِمْ وَمَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ}

"वही हक़ीक़त में ईमान वाले हैं, उनके लिए उनके रब के पास (बुलन्द) दर्जे हैं और मग़्फ़िरत है और इज़्ज़त की रोज़ी है।" (सूरह अन्फ़ाल: 4)

बिलाशुब्हा सहाबा किराम (रज़ि0) की पूरी जमाअत की इन्तिहाई मोहतरम और क़ाबिले नमूना है, लेकिन उनमें भी बाज़ क़ुदसी नुफ़ूस ऐसे हैं जिन्होंने अपनी जमाअत में मुमताज़ मक़ाम हासिल है, जिनमें ख़ास तौर पर चारों ख़ुल्फ़ाए राशिदीन और अशरा–ए–मुबश्शरा हैं, फिर इसके बाद फ़ज़ाएल के लिहाज़ से तरतीबवार दूसरे सहाबा किराम (रज़ि0) हैं, लेकिन इन सबमें हज़राते शेख़ैन (अबूबक्र व उमर) (रज़ि0) को जो ग़ैरमामूली बुलन्द मक़ाम हासिल है वह उन्हीं का हिस्सा है, यह दोनों बाबरकत हज़रात अल्लाह के रसूल (रज़ि0) के दस्त व बाज़ू थे, ख़ासकर हिजरत के मौक़े पर सख़्त आज़माइश के आलम में हज़रत अबूबक्र (रज़ि0) की वफ़ात और जनाबे रिसालते माब (स0अ0व0) से उनकी बातचीत का तज़किरा क़ुरआन मजीद में मज़कूर है, इरशादे इलाही है:

{ثَانِيَ اثْنَيْنِ إِذْ هُمَا فِي الْغَارِ إِذْ يَقُولُ لِصَاحِبِهِ لَا تَحْزَنْ إِنَّ اللَّهَ مَعَنَا فَأَنزَلَ اللَّهُ سَكِينَتَهُ عَلَيْهِ وَأَيَّدَهُ بِجُنُودٍ لَّمْ تَرَوْهَا}

"दो में एक जबकि वह दोनों ग़ार में थे जब वह अपने रफ़ीक़ से कह रहे थे कि ग़म मत करो यक़ीनन अल्लाह हमारे साथ है तो अल्लाह ने अपनी सकीनत उन पर नाज़िल की और ऐसे लश्करों से उनको ताक़त पहुंचाई जो तुम्हें दिखाई न दिये।" (सूरह तौबा: 40)

हासिल यह है कि अल्लाह तबारक व तआला ने जिस तरह अपने नबी (स0अ0व0) को उस्वा–ए–हसना क़रार दिया है, ठीक उसी तरह आप (स0अ0व0) सहाबा (रज़ि0) को उम्मत के लिए एक बेहतरीन नमूना क़रार दिया है और तमाम अहले ईमान को दो टूक अल्फ़ाज़ में मुतनब्बेह कर दिया है कि अगर कोई शख़्स अल्लाह के रसूल और उसके सहाबा (रज़ि0) से जुदा कोई तर्ज़े अमल अख़्तियार करता है तो बिलाशुब्हा वह राहे रास्त से मुन्हरिफ़ है और उसका ठिकाना जहन्नम है। अल्लाह तआला का इरशाद है:

{وَمَن يُشَاقِقِ الرَّسُولَ مِن بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ الْهُدَىٰ وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيلِ الْمُؤْمِنِينَ نُوَلِّهِ مَا تَوَلَّىٰ وَنُصْلِهِ جَهَنَّمَ وَسَاءَتْ مَصِيرًا}

"और जो सही रास्ता सामने आ जाने के बाद भी रसूल की मुख़ालिफ़त करेगा और ईमान वालों के रास्ते से हटकर चलेगा तो वह जिधर भी रुख़ करेगा, उसी रुख़ पर हम उसको डाल देंगे और उसको जहन्नम रसीद करेंगे और वह बदतरीन ठिकाना है।"

वाक़्या यह है कि सहाबा किराम (रज़ि0) की अज़मत और अदालत पर बेशुमार क़ुरआनी नुसूस शाहिद हैं, जो हमें बताते हैं कि सहाबा का अमल हमारे लिए हुज्जत भी हैं और नमूना भी, मगर अफ़सोस है कि बाज़ लोग उन नुसूस पर संजीदगी से ग़ौर नहीं करते और वह सहाबा किराम (रज़ि0) के हर अमल को आम इन्सानों के आमाल की कैफ़ियत व नवीयत में ज़मीन व आसमान का फ़र्क़ है, हदीस में है:

"لَا تَسُبُّوا أَصْحَابِي فَوَالَّذِي نَفْسِي بِيَدِهِ لَوْ أَنَّ أَحَدَكُمْ أَنْفَقَ مِثْلَ أُحُدٍ ذَهَبًا مَا أَدْرَكَ مُدَّ أَحَدِهِمْ وَلَا نَصِيفَهُ۔"

"तुम मेरे सहाबा को बुरा–भला मत कहो, पस उस ज़ात की क़सम! जिसके क़ब्ज़े में मेरी जान है, अगर तुममें से कोई उहद पहाड़ के बराबर सोना भी (राहे ख़ुदा में) ख़र्च कर दे तो भी उनमें से किसी एक के मद या आधे को भी नहीं पहुंचता।" (सुनन तिरमिज़ी: 4234)

इन्तिहाई अफ़सोस का मक़ाम है कि एक मख़्सूस तबक़ा सहाबा किराम (रज़ि0) पर ज़बान दराज़ी का इरतिकाब करता है और इस सिलसिले में इल्मी मोशग़ाफ़ियां बघारने को अपनी रोशन अक़्ली की दलील समझता है, इससे भी बढ़कर अफ़सोस का मक़ाम हमारे उन सादा लौह मुसलमानों और उल्मा के लिए है जो सहाबा किराम की अज़मत का हक़ीक़ी मफ़हूम समझने से क़ासिर हैं, सच्ची बात यह है कि वह क़ुरआन व हदीस के सही फ़हम से क़ासिर हैं वरना किताब व सुन्नत के नुसूस व रोज़ रोशन की तरह अयां हैं और सहाबा किराम (रज़ि0) की अज़मत का खुला सुबूत हैं, मगर बात वही है कि:

{وَمَا يَعْقِلُهَا إِلَّا الْعَالِمُونَ}

"और उनको जानने वाले ही समझते हैं।"

(सूरह अनकबूत: 43)

सहाबा का मक़ाम व मर्तबा और अइम्मा का एतराफ़े फ़ज़्ल

हज़रत मैमूनी (रह०) कहते हैं:

“मैंने इमाम अहमद (रह०) को यह फ़रमाते हुए सुना: आख़िर क्या हो गया है कि लोग हज़रत मुआविया (रज़ि०) की बुराई करते हैं, हम अल्लाह से आफ़ियत के तलबगार हैं, इमाम अहमद (रह०) ने मुझसे कहा: जब तुम किसी शख़्स को देखो कि वह सहाबा (रज़ि०) का ज़िक्र बुराई के साथ कर रहा है तो उसके इस्लाम को मशकूक समझो।”

इमाम मुस्लिम (रह०) के उस्ताद हज़रत अबू ज़रआ (रह०) कहते हैं:

“जब तुम किसी शख़्स को देखो कि वह किसी सहाबी की तन्क़ीस कर रहा है तो समझ लो कि वह ज़िन्दीक़ है, इसलिए कि हमारे नज़दीक रसूलुल्लाह (स०अ०व०) हक़ हैं और क़ुरआन हक़ है, क़ुरआन व सुन्नत हम तक पहुंचाने वाले यही सहाबा किराम हैं। यह तन्क़ीस करने वाले हमारे गवाहों को मजरूह करना चाहते हैं कि किताब व सुन्नत को बातिल साबित करें, लिहाज़ा ख़ुद उनको मजरूह करना ज़्यादा मुनासिब है, यह ज़िन्दीक़ हैं।”

हज़रत इब्राहीम बिन सईद जौहरी (रह०) ने हज़रत अबू ओसामा (रह०) से सवाल किया कि हज़रत मुआविया (रज़ि०) और हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ (रह०) में अफ़ज़ल कौन है? तो उन्होंने फ़रमाया:

“हम असहाबे मुहम्मद (स०अ०व०) के बराबर किसी को नहीं समझते, अफ़ज़ल होना तो दूर की बात है।”

इमाम ज़हबी (रह०) फ़रमाते हैं:

“जिसने सहाबा पर तान व तश्नीअ की या उनको बुरा कहा वह दीन से निकल गया और मिल्लते इस्लामिया से ख़ारिज हो गया, इसलिए कि उन पर तानाज़नी उसी वक़्त मुमकिन है जबकि उनकी बुराई का अक़ीदा हो, उनके लिए दिल में हसद व कीना हो और क़ुरआन व सुन्नत में वारिद उनके फ़ज़ाएल व मनाक़िब का इनकार कर दिया जाए और इसलिए कि यह हज़रात शरीअते मासूरा के निहायत पसंदीदा वसीला और दीने मनक़ूल का वास्ता हैं, वास्ता व ज़रिया को मजरूह करना अस्ल दीन को मजरूह करना है और इसलिए कि नाक़िल की तहक़ीर ख़ुद मनक़ूल की तहक़ीर है, ग़ौर व फ़िक्र से काम लेने वाले और निफ़ाक़ व इल्हाद व ज़िन्दक़ा से पाक किसी शख़्स के लिए यह हक़ीक़त बिल्कुल अयां हैं।”

हज़रत इब्ने हज़्म (रह०) लिखते हैं:

“सहाबा का मामला इसके बरअक्स है और कोई शक्ल नहीं कि रूए ज़मीन का कोई शख़्स अदना सहाबी के दर्जे को पा सके।”

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 07 ❁ July 2024 ❁ Volume: 16

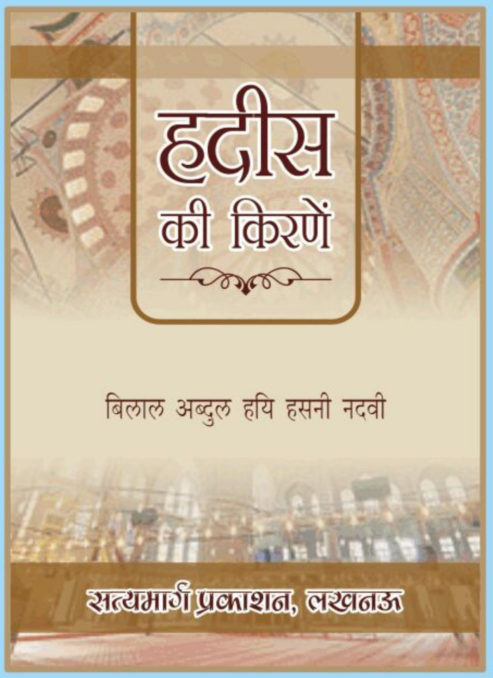

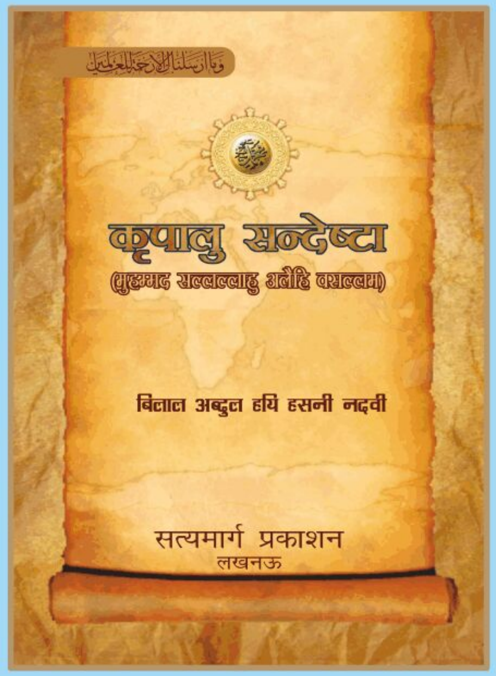

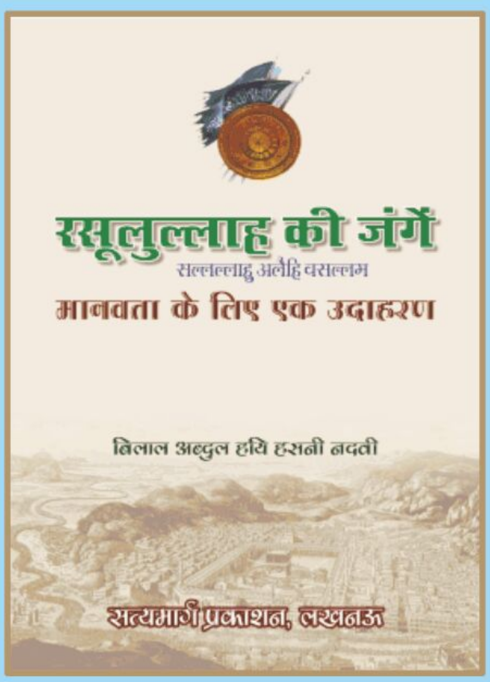

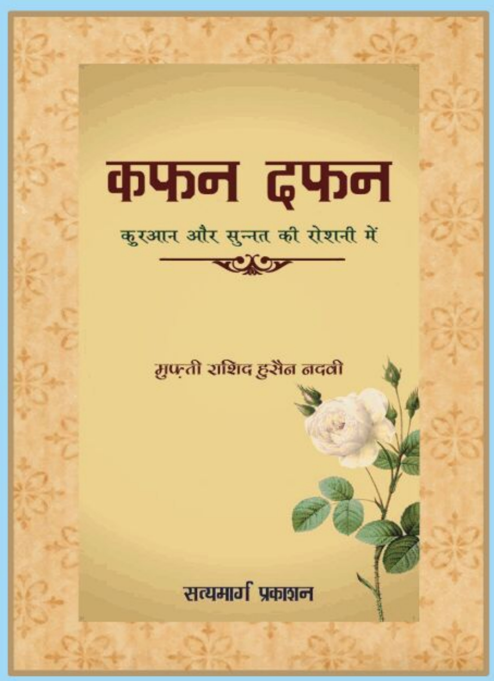

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI

Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.